परिशिष्ट -1

छन्द

छन्द

पद्य लिखते समय वर्णों की एक निश्चित व्यवस्था रखनी पड़ती है। यह व्यवस्था छन्द या वृत्त कहलाती है।

वृत्त के भेद

प्रायः प्रत्येक पद्य के चार भाग होते हैं, जो पाद या चरण कहलाते हैं। जिस वृत्त के चारों चरणों में बराबर वर्ण हों, वे समवृत्त कहलाते हैं। जिसके प्रथम और तृतीय तथा द्वितीय और चतुर्थ चरण वर्णों की दृष्टि से समान हों, वे अर्धसमवृत्त हैं। जिसके चारों चरणों में वर्णों की संख्या समान न हो, वे विषमवृत्त कहे जाते हैं।

गुरु लघु व्यवस्था

छन्द की व्यवस्था वर्णों पर आधारित रहती है, मुख्यतः स्वर वर्ण पर। ये वर्ण छन्द की दृष्टि से दो प्रकार के होते हैं- लघु और गुरु। सामान्यतः ह्रस्व स्वर लघु होता है और दीर्घ स्वर गुरु। किन्तु कुछ परिस्थितियों में ह्रस्व स्वर लघु न होकर गुरु माना जाता है। छन्द में गुरु-लघु व्यवस्था का नियम इस प्रकार है- अनुस्वारयुक्त, विसर्गयुक्त, संयुक्तवर्ण के पूर्व का वर्ण गुरु होता है। शेष सभी वर्ण लघु होते हैं। छन्द के किसी पाद का अंतिम वर्ण लघु होने पर भी आवश्यकतानुसार गुरु मान लिया जाता है।

सानुस्वारश्च दीर्घश्च विसर्गी च गुरुर्भवेत्।
वर्णः संयोगपूर्वश्च तथा पादान्तगोऽपि च॥

गुरु एवं लघु के लिए अधोलिखित चिह्न प्रयुक्त होते हैं-

गुरु - ऽ

लघु - ।

यति व्यवस्था

छन्द में जिस-जिस स्थान पर किञ्चिद् विराम होता है, उसको 'यति' कहते हैं। विच्छेद, विराम, विरति आदि इसके नामान्तर हैं।

यतिर्जिह्वेष्टविश्रामस्थानं कविभिरुच्यते।
सा विच्छेदविरामाद्यैः पदैर्वाच्या निजेच्छया॥

गण व्यवस्था

आदिमध्यावसानेषु भजसा यान्ति गौरवम्।
यरता लाघवं यान्ति मनौ तु गुरुलाघवम्॥

तीन वर्णों का एक गण माना जाता है। गुरु-लघु के क्रम से गण आठ प्रकार के होते हैं।

भगण	-	ऽ।।	**जगण**	-	।ऽ।
सगण	-	।।ऽ	**यगण**	-	।ऽऽ
रगण	-	ऽ।ऽ	**तगण**	-	ऽऽ।
मगण	-	ऽऽऽ	**नगण**	-	।।।

क. वैदिक छन्द

वैदिक मन्त्रों में गेयता का समावेश करने के लिए जिन छन्दों का प्रयोग हुआ है उनमें गायत्री, अनुष्टुप् तथा त्रिष्टुप् प्रमुख हैं।

गायत्री : जिस छन्द के तीन चरण हों, प्रत्येक चरण में आठ वर्ण हों वह गायत्री छन्द होता है। इसका पाँचवाँ वर्ण लघु तथा छठा वर्ण गुरु होता है। उदाहरण–

पावका नः सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती।
यज्ञं वष्टु धिया वसु॥

(*यजुर्वेदः -40/1*)

अनुष्टुप् : अनुष्टुप् छन्द में चार चरण होते हैं, प्रत्येक चरण में आठ वर्ण होते हैं।

सङ्गच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे सञ्जानाना उपासते ॥

त्रिष्टुप् : जिस छन्द के चार चरण हों और प्रत्येक चरण में ग्यारह अक्षर हों वह त्रिष्टुप् छन्द होता है। उदाहरण–

समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सह चित्तमेषाम्
समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि॥

(*ऋग्वेदः 10/192/3*)

ख. लौकिक छन्द

प्रस्तुत पुस्तक के पाठों में अनेक लौकिक छन्दों को भी संकलित किया गया है। अतः संकलित श्लोकों के छन्दों के लक्षण तथा उदाहरण आगे प्रस्तुत हैं–

1. **अनुष्टुप् - आठ वर्णों वाला समवृत्त**

अनुष्टुप् छन्द के सभी चारों चरणों का पाँचवाँ वर्ण लघु, छठा वर्ण गुरु तथा प्रथम एवं तृतीय चरण का सातवाँ वर्ण गुरु और द्वितीय एवं चतुर्थ चरण का सातवाँ वर्ण लघु होता है। इसे श्लोकछन्द भी कहते हैं। उदाहरण–

पतितैः पतमानैश्च, पादपस्थैश्च मारुतः।
कुसुमैः पश्य सौमित्रे! क्रीडन्निव समन्ततः॥

(*रामायणम्*)

2. **इन्द्रवज्रा - (ग्यारह वर्णों वाला समवृत्त)**

जिस छन्द के प्रत्येक पाद में दो तगण, एक जगण और दो गुरु वर्ण क्रम से हों वह इन्द्रवज्रा छन्द होता है।

स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः।

उदाहरण–

हंसो यथा राजतपञ्जरस्थः, सिंहो यथा मन्दरकन्दरस्थः।
वीरो यथा गर्वितकुञ्जरस्थश्चन्द्रोऽपि बभ्राज तथाम्बरस्थः॥

(*रामायणम्*)

3. **उपेन्द्रवज्रा - (ग्यारह वर्णों का समवृत्त)**

जिस छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः एक जगण, एक तगण, एक जगण और दो गुरु वर्ण हों वह उपेन्द्रवज्रा छन्द होता है।

उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौ। उदाहरण–

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देव-देव।

4. **उपजाति - (ग्यारह वर्णों वाला समवृत्त)**

जिस छन्द में इन्द्रवज्रा तथा उपेन्द्रवज्रा के चरणों का मिश्रण होता है, वह उपजाति छन्द होता है।

अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ पादौ यदीयावुपजातयस्ताः।
इत्थं किलान्यास्वपि मिश्रितासु वदन्ति जातिष्विदमेव नाम ॥

इस छन्द का प्रथम तथा तृतीय चरण उपेन्द्रवज्रा छन्दानुसार तथा द्वितीय एवं चतुर्थ चरण इन्द्रवज्रानुसार हैं। अतः इसे उपजाति छन्द कहा जा सकता है।

उदाहरण–

अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा, *(इन्द्रवज्रा)*
हिमालयो नाम नगाधिराजः। *(उपेन्द्रवज्रा)*
पूर्वापरौ तोयनिधीवगाह्य,
स्थितः पृथिव्या इव मानदण्डः॥ *(कुमारसम्भवम्)*

5. मालिनी – (पन्द्रह वर्णों वाला समवृत्त)

जिस छन्द के प्रत्येक चरण में क्रमशः दो नगण, एक मगण तथा दो यगण हों, वह मालिनी छन्द होता है। इसके प्रत्येक चरण में आठवें तथा तदनन्तर सातवें अर्थात् चरण के अन्तिम वर्ण पन्द्रहवें वर्ण के बाद यति (विराम) होती है। **ननमयययुतेयं मालिनी भोगिलोकैः।**

उदाहरण–

मम हि पितृभिरस्य प्रस्तुतो ज्ञातिभेद–
स्तदिह मयि तु दोषो वक्तृभिः पातनीयः।
अथ च मम स पुत्रः पाण्डवानां तु पश्चात्
सति च कुलविरोधे नापराधयन्ति बालाः॥ *(पञ्चरात्रम्)*

6. वंशस्थ – (बारह वर्णों वाला समवृत्त)

जिस छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः जगण, तगण, जगण, रगण हों वह वंशस्थ छन्द कहलाता है।

जतौ तु वंशस्थमुदीरितं जरौ।
भवन्ति नम्रास्तरवः फलोद्गमै–
र्नवाम्बुभिर्दूर विलम्बिनो घनाः।
अनुद्धताः सत्पुरुषाः समृद्धिभिः
स्वभाव एवैष परोपकारिणाम्॥

7. शार्दूलविक्रीडित (उन्नीस अक्षरों वाला समवृत्त)

जिस छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः मगण, सगण, जगण, सगण दो तगण एवं एक गुरु वर्ण हो वह शार्दूलविक्रीडित छन्द कहलाता है। इसमें बारहवें अक्षर के बाद पहली यति और उन्नीसवें अक्षर के बाद दूसरी यति होती है। **(सूर्याश्वैर्यदि मासजौसततगाः शार्दूलविक्रीडितम्।)**

उदाहरण –

वत्सायाश्च रघूद्वहस्य च शिशावस्मिन्नभिव्यज्यते,
संवृत्तिः प्रतिबिम्बतेव निखिला सैवाकृति सा द्युतिः।
सा वाणी विनयः स एव सहजः पुण्यानुभावोऽप्यसौ,
हा! हा! देवि किमुत्यथैर्मम मनः पारिप्लवं धावति॥

उत्तररामचरितम्

8. वसन्ततिलका (चौदह अक्षरों वाला समवृत्त)

जिसके प्रत्येक चरण में क्रमशः तगण, भगण, जगण, जगण एवं दो गुरु वर्ण हों, वह छन्द वसन्ततिलका कहलाता है। **उक्ता वसन्ततिलका तभजाजगौगः**

उदाहरण–

पापान्निवारयति योजयते हिताय
गुह्यं निगूहति गुणान्प्रकटीकरोति।
आपद्गतं च न जहाति ददाति काले
सन्मित्रलक्षणमिदं प्रवदन्ति सन्तः॥

नीतिशतकम् 73

9. शिखरिणी- (सत्रह अक्षरों वाला समवृत्त)

जिसके प्रत्येक चरण में क्रमशः यगण, मगण, नगण, सगण, भगण तथा एक लघु और एक गुरु वर्ण हों, वह शिखरिणी छन्द कहलाता है। छठे और सत्रहवें वर्ण के पश्चात् इसमें यति होती है। **रसैरुद्रैश्छिन्ना यमनसभलागः शिखरिणी।**

उदाहरण–

महिम्नामेतस्मिन् विनयशिशिरो मौग्ध्यमसृणो
विदग्धैर्निर्ग्राह्यो न पुनरविदग्धैरतिशयः।
मनो मे संमोहस्थिरमपि हरत्येष बलवान्
अयोधातुं यद्वत्परिलघुरयस्कान्तशकलः॥

उत्तररामचरितम्

10. मन्दाक्रान्ता (सत्रह अक्षरों वाला समवृत्त)

मगण, भगण, नगण, दो तगणों और दो गुरुओं से मन्दाक्रान्ता छन्द होता है। इसमें चौथे अक्षर के पश्चात् पहली यति, छठे अक्षर के पश्चात दूसरी यति तथा आठवें अक्षर के बाद तीसरी यति होती है।

मन्दाक्रान्ताम्बुधि रसनगैर्मोभनौतौग युग्मम्।

उदाहरण–

पश्चात्पुच्छं वहति विपुलं तच्च धूनोत्यजस्त्रम्
दीर्घग्रीवः स भवति, खुरास्तस्य चत्वार एव।
शष्पाण्यति प्रकिरति शकृत् पिण्डकानाम्रमात्रान्
किं व्याख्यानैर्व्रजति स पुनर्दूरमेह्येहि यामः॥

उत्तररामचरितम्

अलङ्कार

लोक में जिस प्रकार आभूषण शरीर की शोभा बढ़ाने में सहायक होते हैं, उसी प्रकार काव्य में उपमादि अलंकार उसकी चारुता की अभिवृद्धि करते हैं। वस्तुतः काव्य के शोभाधायक तत्व को ही अलंकार कहते हैं।

शब्दार्थयोरस्थिरा ये धर्माः शोभातिशयिनः।
रसादीनुपकुर्वन्तोऽलङ्कारास्तेऽङ्गदादिवत्।।

शब्द तथा अर्थ को काव्य का शरीर कहा गया है। अतः काव्य–शरीर का अलंकरण भी शब्द तथा अर्थ दोनों रूपों में होता है। जो अलंकार शब्दों के द्वारा काव्य में चारुता की अभिवृद्धि करते हैं वे शब्दालंकार कहे जाते हैं, जैसे अनुप्रास, यमक आदि। जो अलंकार अर्थ के द्वारा काव्य की चारुता की अभिवृद्धि करते हैं वे अर्थालंकार कहे जाते हैं, जैसे उपमा, रूपक आदि। इन दोनों प्रकार के अलंकारों का प्रस्तुत संकलन के पाठों में प्रयोग हुआ है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं–

अनुप्रासः

वर्णसाम्यमनुप्रासः। (*काव्यप्रकाशः*)

समान वर्णों की आवृत्ति को अनुप्रास अलंकार कहा जाता है।

उदाहरण –

वहन्ति वर्षन्ति नदन्ति भान्ति ध्यायन्ति नृत्यन्ति समाश्वसन्ति।
नद्यो घना मत्तगजा वनान्ताः प्रियाविहीनाः शिखिनः प्लवङ्गाः।।

(*रामायणम्*)

इस श्लोक में आए हुए वहन्ति, वर्षन्ति, नदन्ति, भान्ति, ध्यायन्ति, नृत्यन्ति तथा समाश्वसन्ति इन शब्दों में अनेक वर्णों की समान आवृत्ति है, जो श्लोक की चारुता की अभिवृद्धि में सहायक है। अतः यहाँ पर **अनुप्रास** अलंकार है।

यमकम्

सत्यर्थे पृथगर्थायाः स्वरव्यञ्जनसंहतेः।
क्रमेण तेनैवावृत्तिर्यमकं विनिगद्यते।। (*साहित्यदर्पणम्*)

जब वर्ण समूह की उसी क्रम से पुनरावृत्ति की जाए, किंतु आवृत्त वर्ण समुदाय या तो भिन्नार्थक हो या अंशतः अथवा पूर्णतः निरर्थक हो तो यमक अलंकार कहलाता है। उदाहरण–

अस्ति यद्यपि सर्वत्र नीरं नीरजराजितम्
रमते न मरालस्य मानसं मानसं विना॥

इस श्लोक में मानसम् शब्द की आवृत्ति हुई है और दोनों पद भिन्नार्थक हैं। अतः यहाँ पर प्रयुक्त अंलकार यमक है जो श्लोक के सौंदर्य की अभिवृद्धि में सहायक है।

उपमा

साधर्म्यमुपमा भेदे। *(काव्यप्रकाशः, 10, 87)*

दो वस्तुओं में, भेद रहने पर भी, जब उनका (समानता) प्रतिपादित किया जाता है तो वहाँ उपमा अलंकार होता है। उदाहण–

रविसङ्क्रान्तसौभाग्यस्तुषारारुणमण्डलः।
निःश्वासान्ध इवादर्शश्चन्द्रमा न प्रकाशते॥ *(रामायणम्)*

यहाँ पर सूर्य के प्रकाश से मलिन चन्द्रमा की उपमा निःश्वासों से मलिन आदर्श (दर्पण) से दी गई है। यह उपमा श्लोक के अर्थ की चारुता की वृद्धि में सहायक है।

उपमा में चार तत्त्व होते हैं

1. उपमेय – जिसकी समानता बताई जाए
2. उपमान – जिससे समानता बताई जाए
3. साधारण धर्म – उक्त दोनों में समान गुण
4. वाचक शब्द – समानता प्रकट करने वाले शब्द– इव यथा आदि।

रूपकम्

तद्रूपकमभेदो य उपमानोपमेययोः। *(काव्यप्रकाशः, 10,93)*

अतिशय सादृश्य के कारण जहाँ उपमेय को उपमान का रूप दे दिया जाये अथवा उपमेय पर उपमान का आरोप कर दिया जाये, वहाँ रूपक अलंकार होता है। उदाहरण–

अनलङ्कृतशरीरोऽपि चन्द्रमुख आनन्दयति मम हृदयम्।

सौवर्णशकटिका पाठ के इस वाक्य में प्रयुक्त चन्द्रमुख शब्द में रूपक अलंकार है। यहाँ पर मुख पर चन्द्रमा का आरोप होने से रूपक अलंकार है।

उत्प्रेक्षा

''भवेत् सम्भावनोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य परात्मना।।

(साहित्यदर्पणम्)

पर (उपमान) के द्वारा प्रकृत (उपमेय) की सम्भावना (उत्कट सन्देह) को उत्प्रेक्षा अलंकार कहते हैं।

उदाहरण–

पतितैः पतमानैश्च पादपस्थैश्च मारुतः।
कुसुमैः पश्य सौमित्रे! क्रीडन्निव समन्ततः।। *(रामायणम्)*

यहाँ पर वायु के द्वारा पुष्पों के साथ की जाने वाली क्रीडा की सम्भावना में उत्प्रेक्षा अलंकार है।

अर्थान्तरन्यासः

भवेदर्थान्तरन्यासोऽनुषक्तार्थान्तराभिधा।

(चन्द्रालोकः, 5.66)

मुख्य अर्थ का समर्थन करने वाले अर्थान्तर (दूसरे वाक्यार्थ) का प्रतिपादन (न्यास) अर्थान्तरन्यास कहलाता है। उदाहरण–

यः स्वभावो हि यस्यास्ति स नित्यं दुरतिक्रमः।
श्वा यदि क्रियते राजा तत्किं नाश्नात्युपानहम्।।

यहाँ पर पूर्वार्द्ध के वाक्यार्थ का समर्थन उत्तरार्द्ध के वाक्यार्थ द्वारा किया गया है। अतः यहाँ अर्थान्तरन्यास अलंकार है।

अतिशयोक्तिः

सिद्धत्वेऽध्यवसायस्यातिशयोक्तिर्निगद्यते।

(साहित्यदर्पणम्, 10.46)

अध्यवसाय के सिद्ध उपमेय के लिए केवल उपमान का ही कथन होने पर अतिशयोक्ति अलंकार होता है। अध्यवसाय का तात्पर्य है– उपमेय के निगरण के साथ उपमान से अभेद का आरोप अर्थात् उपमेय तथा उपमान में अभेद की स्थापना ।

उदाहरण–

यूथेऽपयाते हस्तिग्रहणोद्यतेन केन कलभो गृहीतः।

यहाँ पर अर्जुन को हस्ती तथा अभिमन्यु को कलभ (हाथी का बच्चा) के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इस प्रकार उपमेय अर्जुन व अभिमन्यु का निगरण कर उन्हें उपमान हस्ती तथा कलभ के रूप में प्रस्तुत किया गया है। अतः यहाँ अतिशयोक्ति अलंकार है।

श्लेषः

श्लिष्टैः पदैरनेकार्थाभिधाने श्लेष इष्यते।

(साहित्यदर्पणम्) पद या पद समुदाय द्वारा अनेक अर्थों का कथन श्लेष अलङ्कार कहलाता है।

उच्छलद् भूरि कीलालः शुशुभे वाहिनीपतिः।

यहाँ पर 'कीलाल' तथा 'वाहिनीपति' शब्दों में अनेक अर्थ होने के कारण श्लेष अलङ्कार है। (कीलाल = रुधिर/जल, वाहिनीपति = सेनापति/समुद्र)।

व्याजस्तुतिः

व्याजस्तुतिर्मुखे निन्दा स्तुतिर्वा रूढिरन्यथा।

(काव्यपकाश) प्रारम्भ में निन्दा अथवा स्तुति प्रतीत हो, परन्तु वास्तव में वह उसके विपरीत हो अर्थात् दीखने वाली निन्दा का स्तुति में अथवा स्तुति का निन्दा में पर्यवसान होने पर व्याजस्तुति अलंङ्कार होता है।

उदाहरण–

हित्वा त्वामुपरोधवन्ध्यमनसां मध्ये न मौलिः परो,
लज्जावर्जनमन्तरेण न रमामन्यत्र सन्दृश्यते।
यस्त्यागं तनुतेतरां मुखशतैरेत्याश्रितायाः श्रियः
प्राप्य त्यागकृतावमाननमपि त्वय्येव यस्याः स्थितिः॥

अर्थात् हे राजन्! मुझे तो यही स्पष्ट लग रहा है कि आपको छोड़कर न तो आश्रितों के अनुरोध से रिक्तहृदय आश्रयदाताओं का कोई दूसरा शिरोमणि है और न लक्ष्मी को छोड़कर कहीं अन्यत्र (स्त्रीजाति में) कोई निर्लज्जता दिखाई देती है, क्योंकि आप तो ऐसे ठहरे कि नानाविध उपायों से स्वाश्रिता लक्ष्मी के अनवरत परित्याग (दान) से अपमानित होकर भी लक्ष्मी सदा आपके साथ ही रहना चाहती हैं।

यहाँ राजा की आपाततः निन्दा उसके महादान या लक्ष्मी समृद्धि की स्तुति (प्रशंसा) में परिणत हो रही है।

अतः व्याजस्तुति अलंकार है।

अन्योक्तिः

असमानविशेषणमपि यत्र समानेतिवृत्तमुपमेयम्।
उक्तेन गम्यते परमुपमानेनेति साऽन्योक्तिः॥

(काव्यालङ्कारः)

जहाँ कथित उपमान के द्वारा ऐसे उपमेय की प्रतीति हो जो (उपमान के) विशेषणों के असमान होता हुआ भी समान इतिवृत्त वाला हो, वहाँ अन्योक्ति अलंकार होता है।

उदाहरण–

तावत् कोकिल विरसान् यापय दिवसान् वनान्तरे निवसन्।
यावन्मिलदलिमालः कोऽपि रसालः समुल्लसति॥

(रसगङ्गाधरः)

हे कोयल! वन में रहते हुए अपने बुरे समय को तब तक किसी प्रकार बिता लो जब तक कि कोई बौर (मंजरी) से लदा हुआ भौरों से युक्त आम का पेड़ तुम्हें नहीं मिल जाए।

यहाँ कोयल उपमान है और कोई सज्जन उपमेय है। यद्यपि कोयल और सज्जन के विशेषण एकसमान नहीं हैं तथापि इनका इतिवृत्त एक समान है। अतः यहाँ पर अन्योक्ति अलंकार है।



अनुशंसित ग्रन्थ

क्र.सं.	ग्रन्थनाम	लेखक	सम्पादक/प्रकाशक
1.	**ईशावास्योपनिषद्**	वेदव्यास	गीताप्रेस, गोरखपुर
2.	**रघुवंशमहाकाव्यम्**	कालिदास	चौखंबा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी
3.	**उत्तररामचरितम्**	भवभूति	चौखंबा प्रकाशन, वाराणसी
4.	**श्रीमद्भगवद्गीता**	वेदव्यास	गीताप्रेस, गोरखपुर
5.	**कादम्बरी**	बाणभट्ट	चौखंबा प्रकाशन, वाराणसी
6.	**सिंहासनद्वात्रिंशिका**		
7.	**शिवराजविजयः**	अम्बिकादत्तव्यासः	साहित्य भंडार, मेरठ
8.	**संस्कृतचन्द्रिकापत्रिका**	अप्पाशस्त्रिराशि वडेकरः	
9.	**प्रबन्धमञ्जरी**	हृषीकेशभट्टाचार्यः	
10.	**प्रबन्धपारिजातम्**	भट्टमथुरानाथ शास्त्री	
11.	**द संस्कृत ड्रामा इन इट्स ऑरिजन डवलपमेंट थ्योरी एंड प्रेक्टिस (1920)**	आर्थर बेरीडेल कीथ *प्रो.फ़ेसर*	आक्सफोर्ड प्रैस लंदन 22
12.	**संस्कृत नाटक**	ए. बी. कीथ	उदयभानु सिंह (हिंदी अनुवाद) मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली
13.	**संस्कृत साहित्य का इतिहास**	बलदेव उपाध्याय	शारदा मन्दिर, वाराणसी, 1973
14.	**वैदिक साहित्य और संस्कृति**	बलदेव उपाध्याय	शारदा मन्दिर, वाराणसी, 1973

15.	**हिस्ट्री ऑफ़ क्लासिकल संस्कृत लेटरेचर**	एम. क्रिश्नमआचार्य	मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली
16.	**संस्कृत साहित्य का इतिहास**	वाचस्पति गैरोला	चौखंबा विधाभवन, वाराणसी, 1978
17.	**संस्कृत साहित्य का अभिनव इतिहास**	राधावल्लभ त्रिपाठी	विश्वविद्यालय प्रकाशन चौक, वाराणसी द्वि सं., 2007
18.	**छन्दोमञ्जरी**	गंगादास	डॉ ब्रह्मानन्द त्रिपाठी, चौखंबा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी, 1903
19.	**व्याकरण-सौरभम्**		रा.शै.अनु.अ.प्र.प. द्वारा प्रकाशित
20.	**संस्कृत साहित्य परिचय**		रा.शै.अनु.अ.प्र.प. द्वारा प्रकाशित
21.	**चन्द्रालोक**	जयदेव	सं. तथा अनु. सुबोधचन्द्र पन्त, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1925
22.	**वृत्तरत्नाकरः**	भट्टकेदार,	सं. आर्येन्दु शर्मा, संस्कृत अकादमी, उस्मानिया विश्व-विद्यालय, हैदराबाद
23.	**समुद्रसङ्गमः**	दाराशिकोह	हिंदी अनु. बाबू लाल शुक्ल शास्त्री भारतीय विद्या प्रकाशन, दिल्ली, 1995 वही- हिंदी अनु. जगन्नाथ पाठक राका प्रकाशन, इलाहाबाद, 2005
24.	**कथासरित् (पत्रिका) (द्वितीयाङ्कः)**	सम्पादकः डॉ. नारायणदाश	कटकम्, ओडिशा





12078CH01

प्रथमः पाठः

विद्ययाऽमृतमश्नुते

प्रस्तुत पाठ ईशावास्योपनिषत् से संकलित है। 'ईशावास्यम्' पद से आरम्भ होने के कारण इसे ईशावास्योपनिषत् की संज्ञा दी गयी है। यह उपनिषत् यजुर्वेद की माध्यन्दिन एवं काण्व संहिता का 40वाँ अध्याय है, जिसमें 18 मन्त्र हैं।

इस संकलन के आद्य दो मन्त्रों में ईश्वर की सर्वत्र विद्यमानता को दर्शाते हुए, कर्तव्य भावना से कर्म करने एवं त्यागपूर्वक संसार के पदार्थों का उपयोग एवं संरक्षण करने का निर्देश है। आत्मस्वरूप ईश्वर की व्यापकता को जो लोग स्वीकार नहीं करते हैं, उनके अज्ञान को तृतीय मन्त्र में दर्शाया है। चतुर्थ मन्त्र में चैतन्य स्वरूप, स्वयं प्रकाश एवं विभु सर्वव्यापक आत्म तत्त्व का निरूपण है। पञ्चम एवं षष्ठ मन्त्रों में अविद्या अर्थात् व्यावहारिक ज्ञान एवं विद्या अर्थात् आध्यात्मिक ज्ञान पर सूक्ष्म चिन्तन निहित है। अन्तिम मन्त्र व्यावहारिक ज्ञान से लौकिक अभ्युदय एवं अध्यात्मज्ञान से अमरता की प्राप्ति को बतलाता है।

इस पाठ्यांश से यह सन्देश मिलता है कि लौकिक एवं अध्यात्म विद्या एक दूसरे की पूरक है तथा मानव जीवन की परिपूर्णता एवं सर्वाङ्गीण विकास में समान रूप से महत्त्व रखती हैं।

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत् ।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम् ॥1॥

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः ।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे ॥2॥

असुर्या नाम ते लोका अन्धेन तमसाऽऽवृताः ।
ताँस्ते प्रेत्याभिगच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः ॥3॥

अनेजदेकं मनसो जवीयो नैनद्देवा आप्नुवन्पूर्वमर्षत् ।
तद्धावतोऽन्यानत्येति तिष्ठत्तस्मिन्नपो मातरिश्वा दधाति ॥4॥

अन्धन्तमः प्रविशन्ति येऽविद्यामुपासते ।
ततो भूय इव ते तमो य उ विद्यायां रताः ॥5॥

अन्यदेवाहुर्विद्यया अन्यदाहुरविद्यया ।
इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे ॥6॥

विद्यां चाविद्यां च यस्तद्वेदोभयं स ह ।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते ॥7॥

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

ईशावास्यम् – ईशस्य ईशेन वा आवास्याम्। ईश के रहने योग्य अर्थात् ईश्वर से व्याप्त।

जगत् – गच्छति इति जगत्। सततं परिवर्तमानः प्रपञ्चः। सतत परिवर्तनशील संसार।

भुञ्जीथाः – भोगं कुरु। भोग करो। विषय वस्तु का ग्रहण करो। भुज् (पालने अभ्यवहारे च) धातु, आत्मनेपदी, विधिलिङ्, मध्यम पुरुष, एकवचन।

मा गृधः – लोलुपः मा भव। लोलुप मत हो। लोभ मत करो। गृध् (अभिकांक्षायाम्) धातु। लङ् लकार, मध्यम पुरुषः एकवचन में 'अगृधः' रूप बनता है। व्याकरण नियमानुसार निषेधार्थक अव्यय 'माङ्' के योग में 'अगृधः' के आरम्भ में विद्यमान 'अ' कार का लोप होता है।

कस्यस्विद् – किसी का। इस के समानार्थक पद हैं–कस्यचित्, कस्यचन। अव्यय।

कुर्वन्नेव – करते हुए ही। कृ + शतृ पुंलिङ्ग, प्रथमा विभक्ति, एकवचन कुर्वन् + एव।

जिजीविषेत् – जीवितुम् इच्छेत्। जीने की इच्छा करें। जीव (प्राणधारणे) धातु, इच्छार्थक सन् प्रत्यय से विधि लिङ्। जीव + सन् + विधिलिङ्।

कर्म न लिप्यते – कर्म लिप्त नहीं होता। लिप (उपदेहे) धातु, लट्, कर्मणि प्रयोग। 'कर्म नरे न लिप्यते–यह एक विशिष्ट वैदिक प्रयोग है। तुलना कीजिये–'लिप्यते न स पापेन।' (भगवद्गीता–5.10)

असुर्याः – प्रकाशहीन। अथवा असुर सम्बन्धी। अविद्यादि दोषों से युक्त, प्राणपोषण में निरत। असुर + य; असु + रा + य। बहुवचन।

अन्धेन तमसा – अत्यन्त अज्ञान रूपी अन्धकार से। 'तमः' शब्द अज्ञान का बोधक।

आवृताः – आच्छादित। आ + वृ (वरणे) + क्त।

प्रेत्य – मरणं प्राप्य, मरण प्राप्तकर। इण् (गतौ) धातु। प्र + इ + ल्यप्।

आत्महनः – आत्मानं ये घ्नन्ति। आत्मा की व्यापकता को जो स्वीकार नहीं करते। 'आत्मानं = ईशं सर्वतः पूर्णं चिदानन्दं घ्नन्ति = तिरस्कुर्वन्ति (शाङ्करभाष्ये)'।

अनेजत् – कम्पन रहित। विकार रहित, स्थिर, अचल। एजृ (कम्पने) धातु। न + एज् + शतृ। नपुंसक लिङ्ग, प्रथमा विभक्ति एकवचन।

जवीयः – अतिशयेन जववत्। अधिक वेगवाला। जव + मतुप् + ईयस्। नपुंसक लिङ्ग, प्रथमा विभक्ति एकवचन।

न आप्नुवन् – प्राप्त नहीं किया। आप्लृ (व्याप्तौ), लङ् लकार प्रथम पुरुष बहुवचन।

अर्षत् – गच्छत्। गमनशील। ऋषी (गतौ) धातु। शतृ प्रत्यय, नपुंसक लिङ्ग, प्रथमा विभक्ति एकवचन। अथवा ऋ (गतौ) धातु, लेट् लकार।

तिष्ठत् – स्थिर रहने वाला। परिवर्तन रहित। स्था + शतृ, नपुंसक लिङ्ग, प्रथमा विभक्ति एकवचन।

मातरिश्वा – वायु। प्राणवायु। मातरि = अन्तरिक्षे श्वयति = गच्छति इति मातरिश्वा। नकारान्त पुंलिङ्ग, प्रथमा विभक्ति एकवचन।

प्रविशन्ति – प्रवेश करते हैं। प्र + विश् (प्रवेशने) लट् लकार प्रथम पुरुष बहुवचन।

उपासते – उपासना करते हैं। उप + आसते। आस् (उपवेशने) धातु लट् लकार प्रथम पुरुष बहुवचन। आस्ते आसाते आसते।

ततोभूय इव – उससे अधिक। तीनों पद अव्यय हैं।

रताः – रमण करते हैं। निरत हैं। रम् (क्रीडायां) + क्त। प्रथमा विभक्ति बहुवचन।

वेद – जानता है। विद् (ज्ञाने) धातु, लट् लकार प्रथम पुरुष एकवचन।

उभयम् – दोनों।

तीर्त्वा – तरणकर। तॄ (प्लवनतरणयो:) + क्त्वा। अव्यय।

अमृतम् – अमरता को। जन्म-मृत्यु के दु:ख से रहित अमरत्व को।

अश्नुते – प्राप्त करता है। अश् (भोजने) धातु। भोजनार्थक धातु इस सन्दर्भ में प्राप्ति के अर्थ में है। (अश्नुते प्राप्तिकर्मा; निघण्टु: 2.18)

आहु: – कहते हैं। ब्रूञ् (व्यक्तायां वाचि) लट् लकार प्रथम पुरुष बहुवचन।

शुश्रुम – सुन चुके हैं। श्रु (श्रवणे) धातु, लिट् लकार उत्तम पुरुष बहुवचन।

विचचक्षिरे – स्पष्ट उपदेश दिये थे। वि + चक्षिङ् (आख्याने) धातु, लिट् लकार प्रथम पुरुष बहुवचन। चचक्षे चचक्षाते चचक्षिरे।

विद्या – ज्ञान, अध्यात्म ज्ञान। विद् (ज्ञाने) + क्यप् + टाप्। यहाँ 'अध्यात्म विद्या' के अर्थ में 'विद्या' शब्द का प्रयोग हुआ है। इस चराचर जगत् में सर्वत्र व्याप्त आत्मस्वरूप ईश्वर के ज्ञान को 'अध्यात्मविद्या' की संज्ञा दी गयी है। यह यथार्थ ज्ञान 'विद्या' है। मोक्ष विद्या नाम से भी जाना जाता है।

अविद्या – अध्यात्मेतर विद्या, व्यावहारिक विद्या। अध्यात्म ज्ञान से भिन्न सभी ज्ञान। न + विद्या। 'न' का अर्थ है 'इतर' अथवा 'भिन्न'। अर्थात् 'आत्मविद्या से भिन्न' जो भी ज्ञानराशि है जैसे सृष्टिविज्ञान, यज्ञविद्या, भौतिक विज्ञान, आयुर्विज्ञान, प्रौद्योगिकी, सूचना-तन्त्र-ज्ञान आदि अविद्या पद में समाहित हैं।

अभ्यास:

1. **संस्कृतभाषया उत्तरं लिखत ।**

(क) ईशावास्योपनिषद् कस्या: संहिताया: भाग:?

(ख) जगत्सर्वं कीदृशम् अस्ति?

(ग) पदार्थभोग: कथं करणीय:?

(घ) शतं समा: कथं जिजीविषेत्?

(ङ) आत्महनो जना: कीदृशं लोकं गच्छन्ति?

(च) मनसोऽपि वेगवान् क:?

(छ) तिष्ठन्नपि कः धावतः अन्यान् अत्येति?

(ज) अन्धन्तमः के प्रविशन्ति?

(झ) धीरेभ्यः ऋषयः किं श्रुतवन्तः?

(ञ) अविद्यया किं तरति?

(ट) विद्यया किं प्राप्नोति?

2. 'ईशावास्यम्......कस्यस्विद्धनम्' इत्यस्य भावं सरलसंस्कृतभाषया विशदयत ।

3. 'अन्धन्तमः प्रविशन्ति......विद्यायां रताः' इति मन्त्रस्य भावं हिन्दीभाषया आंग्लभाषया वा विशदयत ।

4. 'विद्यां चाविद्यां च......ऽमृतमश्नुते' इति मन्त्रस्य तात्पर्यं स्पष्टयत ।

5. रिक्तस्थानानि पूरयत ।

(क) इदं सर्वं जगत् ....।

(ख) मा गृधः .... ।

(ग) शतं समाः .... जिजीविषेत्।

(घ) असुर्या नाम लोका .... आवृताः।

(ङ) अविद्योपासकाः .... प्रविशन्ति।

6. अधोलिखितानां सप्रसङ्गं हिन्दीभाषया व्याख्या कार्या ।

(क) तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः।

(ख) न कर्म लिप्यते नरे।

(ग) तस्मिन्नपो मातरिश्वा दधाति।

(घ) अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते।

(ङ) एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति।

(च) तांस्ते प्रेत्याभिगच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः।

(छ) अनेजदेकं मनसो जवीयो नैनद्देवा आप्नुवन् पूर्वमर्षत्।

7. उपनिषन्मन्त्रयोः अन्वयं लिखत ।

अन्यदेवाहुर्विद्यया अन्यदाहुरविद्यया ।
इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे ।।
अनेजदेकं मनसो जवीयो नैनद्देवा आप्नुवन्पूर्वमर्षत् ।
तद्धावतोऽन्यानत्येति तिष्ठत्तस्मिन्नपो मातरिश्वा दधाति ।।

8. प्रकृतिं प्रत्ययं च योजयित्वा पदरचनां कुरुत ।

त्यज् + क्त; कृ + शतृ; तत् + तसिल्

9. प्रकृतिप्रत्ययविभागः क्रियताम् ।

प्रेत्य, तीर्त्वा, धावतः, तिष्ठत्, जवीयः

10. अधोलिखितानि पदानि आश्रित्य वाक्यरचनां कुरुत ।

जगत्यां, धनम्, भुञ्जीथाः, शतम्, कर्माणि, तमसा, त्वयि, अभिगच्छन्ति, प्रविशन्ति, धीराणां, विद्यायाम्, भूयः, समाः।

11. सन्धिं सन्धिविच्छेदं वा कुरुत ।

(क) ईशावास्यम् .... + ...

(ख) कुर्वन्नेवेह .... + ... + ...

(ग) जिजीविषेत् + शतं ....

(घ) तत् + धावतः ....

(ङ) अनेजत् + एकं ....

(च) आहुः + अविद्यया ....

(छ) अन्यथेतः .... + ...

(ज) तांस्ते .... + ...

12. अधोलिखितानां समुचितं योजनं कुरुत ।

धनम्	—	वायुः
समाः	—	आत्मानं ये घ्नन्ति
असुर्याः	—	श्रुतवन्तः स्म
आत्महनः	—	तमसाऽऽवृताः
मातरिश्वा	—	वर्षाणि
शुश्रुम	—	अमरतां
अमृतम्	—	वित्तम्

13. अधोलिखितानां पदानां पर्यायपदानि लिखत ।

नरे, ईशः, जगत्, कर्म, धीराः, विद्या, अविद्या

14. अधोलिखितानां पदानां विलोमपदानि लिखत ।

एकम्, तिष्ठत्, तमसा, उभयम्, जवीयः, मृत्युम्

योग्यताविस्तारः

समग्रेऽस्मिन् विश्वे ज्ञानस्याद्यं स्रोतो वेदराशिरिति सुधियः आमनन्ति। तादृशस्य वेदस्य सारः उपनिषत्सु समाहितो वर्तते। उपनिषदां 'ब्रह्मविद्या' 'ज्ञानकाण्डम्' 'वेदान्तः' इत्यपि नामान्तराणि विद्यन्ते। उप-नि इत्युपसर्गसहितात् सद् (षद्लृ) धातोः क्विप् प्रत्यये कृते उपनिषत्-शब्दो निष्पद्यते, येन अज्ञानस्य नाशो भवति, आत्मनो ज्ञानं साध्यते, संसारचक्रस्य दुःखं शिथिलीभवति तादृशो ज्ञानराशिः उपनिषत्पदेन अभिधीयते। गुरोः समीपे उपविश्य अध्यात्मविद्याग्रहणं भवतीत्यपि कारणात् उपनिषदिति पदं सार्थकं भवति।

प्रसिद्धासु 108 उपनिषत्स्वपि 11 उपनिषदः अत्यन्तं महत्त्वपूर्णाः महनीयाश्च। ताः ईश-केन-कठ-प्रश्न-मुण्डक-माण्डूक्य-ऐतरेय-तैत्तिरीय-छान्दोग्य-बृहदारण्यक-श्वेताश्वतराख्याः वेदान्ताचार्याणां टीकाभिः परिमण्डिताः सन्ति।

आद्यायाम् ईशावास्योपनिषदि 'ईशाधीनं जगत्सर्वम्' इति प्रतिपाद्य भगवदर्पणबुद्ध्या भोगो निर्दिश्यते। ईशोपनिषदि 'जगत्यां जगत्' इति कथनेन समस्तब्रह्माण्डस्य या गत्यात्मकता निरूपिता सा आधुनिकगवेषणाभिरपि सत्यापिता। सततं परिवर्तमाना ब्रह्माण्डगता *चलनस्वभावा* या सृष्टिः-पशूनां प्राणिनां, तेजःपुञ्जानां, नदीनां, तरङ्गाणां, वायोः वा; या च स्थिरत्वेन अवलोक्यमाना सृष्टिः-पर्वतानां,

वृक्षाणां, भवनादीनां वा सा सर्वा अपि सृष्टिः ईश्वराधीना सती चलत्स्वभावा एव। ईश्वरस्य विभूत्या सर्वा अपि सृष्टिः परिपूर्णा चलत्स्वभावा च चकास्ते। तदुक्तं भगवद्गीतायाम्–

यद्यद्विभूतिमत्सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेव वा ।
तत्तदेवावगच्छ त्वं मम तेजोंऽशसम्भवम् ॥ इति ॥

भगवद्गीता–10.41

उपनिषत्प्रस्थानरहस्यं विद्याया अविद्यायाश्च समन्वयमुखेन अत्र उद्घाटितमस्ति। ये जना अविद्यापदवाच्येषु यज्ञयागादिकर्मसु, भौतिक–शास्त्रेषु, लौकिकेषु ज्ञानेषु दैनन्दिनसुखसाधनसञ्चयनार्थं संलग्नमानसा भवन्ति ते लौकिकीम् उन्नतिं प्राप्नुवन्त्येव; किन्तु तेषां तेषां जनानाम् आध्यात्मिकं बलम्, अन्तस्सत्त्वं वा निस्सारं भवति। ये तु विद्यापदवाच्ये आत्मज्ञाने *एव* केवलं संलग्नमनसः भवन्ति, भौतिकज्ञानस्य साधनसामग्रीणां च तिरस्कारं कुर्वन्ति ते जीवननिर्वाहे, लौकिकेऽभ्युदये च क्लेशमनुभवन्ति।

अत एव **अविद्यया** भौतिकज्ञानराशिभिः मानवकल्याणकारीणि जीवनयात्रासम्पादकानि वस्तूनि सम्प्राप्य **विद्यया** आत्मज्ञानेन–ईश्वरज्ञानेन जन्ममृत्युदुःखरहितम् अमृतत्वं प्राप्नोति। विद्याया अविद्यायाश्च ज्ञानेन एव इह लोके सुखं परत्र च अमृतत्वमिति कल्याणीं वाचम् उपदिशति उपनिषत् 'अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते' इति।

पाठ्यांशेन सह भावसाम्यं पर्यालोचयत ।

नियतं कुरु कर्म त्वं कर्म ज्यायोऽह्यकर्मणः।
शरीरयात्रापि च ते न प्रसिद्ध्येदकर्मणः ।। *भगवद्गीता–3.8*

अशब्दमस्पर्शमरूपमव्ययं तथाऽरसं नित्यमगन्धवच्च यत्।
अनाद्यनन्तं महतः परं ध्रुवं निचाय्य तन्मृत्युमुखात्प्रमुच्यते।। *कठोपनिषत्–3.15*

कठोपनिषदि प्रतिपादितं श्रेयः प्रेयश्च अधिकृत्य सङ्गृह्णीत ।

दिङ्मात्रं यथा–
श्रेयश्च प्रेयश्च मनुष्यमेतस्
तौसंपरीत्य विविनक्ति धीरः।
श्रेयो हि धीरोऽभिप्रेयसो वृणीते
प्रेयो मन्दो योगक्षेमात् वृणीते।।

कठोपनिषत्–2.2

विविधासु उपनिषत्सु प्रतिपादिताम् आत्मप्राप्तिविषयकजिज्ञासां विशदयत

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो
न मेधया न बहुना श्रुतेन।
यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष
आत्मा विवृणुते तनूं स्वाम्।।

कठोपनिषत्–2.23

वैदिकस्वराः

वैदिकमन्त्रेषु उच्चारणदृष्ट्या त्रिविधानां 'स्वराणां' प्रयोगो भवति। मन्त्राणाम् अर्थमधिकृत्य चिन्तनं प्रकृतिप्रत्यययोः योगं, समासं वाश्रित्य भवति। तत्र अर्थनिर्धारणे स्वरा महत्त्वपूर्णा भवन्ति। 'उच्चैरुदात्तः' 'नीचैरनुदात्तः' 'समाहारः स्वरितः' इति पाणिनीयानुशासनानुरूपम् उदात्तस्वरः ताल्वादिस्थानेषु उपरिभागे उच्चारणीयः, अनुदात्तस्वरः ताल्वादीनां नीचैः स्थानेषु, उभयोः स्वरयोः समाहाररूपेण (समप्रधानत्वेन) स्वरित उच्चारणीय इति उच्चारणक्रमः। वैदिकशब्दानां निर्वचनार्थं प्रवृत्ते निरुक्ताख्ये ग्रन्थे पाणिनीयशिक्षायां च स्वरस्य महत्त्वम् इत्थमुक्तम्–

मन्त्रो हीनस्स्वरतो वर्णतो वा
मिथ्याप्रयुक्तो न तमर्थमाह।
स वाग्वज्रो यजमानं हिनस्ति
यथेन्द्रशत्रुस्स्वरतोऽपराधात्।।

मन्त्राः स्वरसहिताः उच्चारणीया इति परम्परा। अतः स्वरितस्वरः अक्षराणाम् उपरि चिह्नेन, अनुदात्तस्वरः अक्षराणां नीचैः चिह्नेन, उदात्तस्वरः किमपि चिह्नं विना च मन्त्राणां पठन–सौकर्यार्थं प्रदर्श्यते।





द्वितीयः पाठः

रघुकौत्ससंवादः

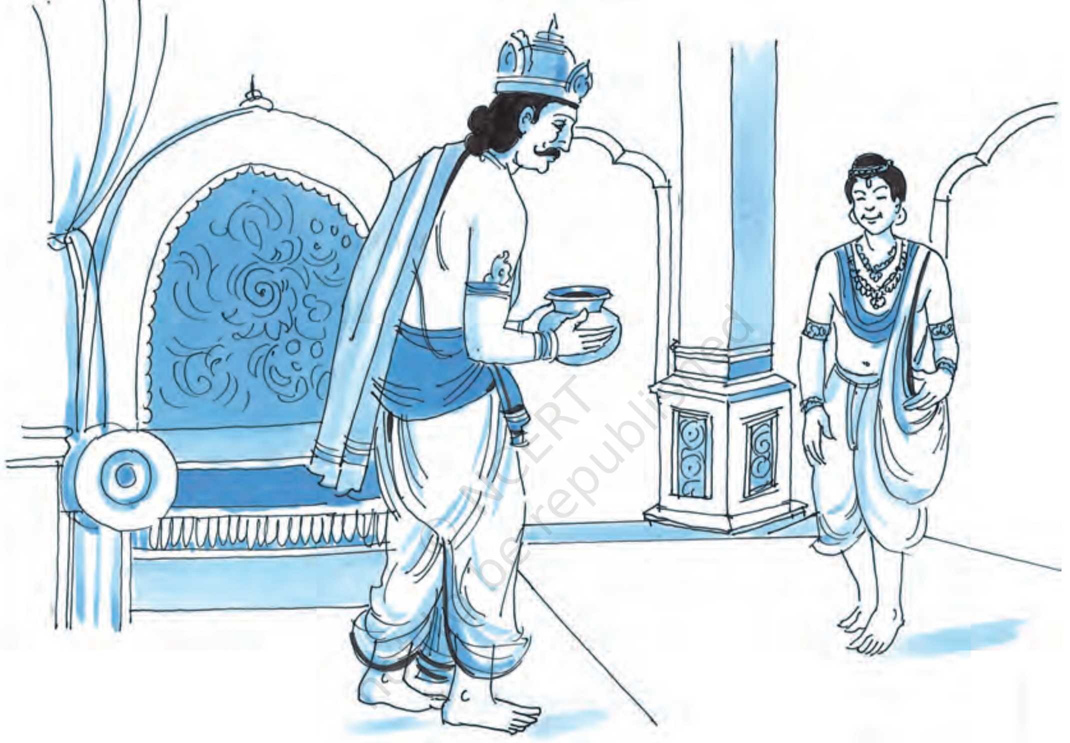
प्रस्तुत पाठ्यांश महाकवि कालिदास द्वारा विरचित रघुवंश महाकाव्य के पञ्चम सर्ग से संकलित है। इसमें महाराज रघु एवं वरतन्तु ऋषि के शिष्य कौत्स नामक ब्रह्मचारी के मध्य साकेत नगरी में हुआ संवाद वर्णित है।

कौत्स वेद, पुराण, वेदाङ्ग, दर्शन आदि 14 विद्याओं का अध्ययन समाप्त करके गुरुदक्षिणा देने की इच्छा से अपने गुरु वरतन्तु से बार-बार गुरुदक्षिणा लेने की प्रार्थना करता है। गुरु द्वारा गुरुभक्ति को ही गुरुदक्षिणा रूप में मानने पर भी कौत्स की निरन्तर प्रार्थना से रुष्ट होकर वरतन्तु उसे गुरुदक्षिणा के रूप में 14 करोड़ स्वर्णमुद्राएँ देने की आज्ञा देते हैं।

कौत्स विश्वजित् नामक यज्ञ में सर्वस्व दान कर चुके महाराज रघु के पास गुरुदक्षिणा के लिए धन माँगने आता है। महाराज रघु धनपति कुबेर पर आक्रमण करने की योजना बनाते हैं। भयभीत कुबेर रघु के कोषागार में सुवर्ण-वृष्टि कर देते हैं। रघु कौत्स को धन प्रदान कर सन्तुष्ट होते हैं और कौत्स भी गुरु को देने के लिए गुरुदक्षिणा प्राप्त कर सन्तुष्ट हो जाते हैं।

प्रस्तुत पाठ्यांश से यह सन्देश मिलता है कि शासक को सर्वसाधारण जन के प्रति उदार एवं कल्याणकारी होना चाहिए तथा याचक को अपनी आवश्यकता से अधिक प्राप्त करने की इच्छा नहीं रखनी चाहिए।

तमध्वरे विश्वजिति क्षितीशं
निःशेषविश्राणितकोषजातम् ।
उपात्तविद्यो गुरुदक्षिणार्थी
कौत्सः प्रपेदे वरतन्तुशिष्यः ॥1॥



स मृण्मये वीतहिरण्मयत्वात्
पात्रे निधायार्घ्यमनर्घशीलः ।
श्रुतप्रकाशं यशसा प्रकाशः
प्रत्युज्जगामातिथिमातिथेयः ॥2॥

तमर्चयित्वा विधिवद्विधिज्ञः
तपोधनं मानधनाग्रयायी ।
विशाम्पतिर्विष्टरभाजमारात्
कृताञ्जलिः कृत्यविदित्युवाच ॥3॥

अप्यग्रणीर्मन्त्रकृतामृषीणां
कुशाग्रबुद्धे कुशली गुरुस्ते।
यतस्त्वया ज्ञानमशेषमाप्तं
लोकेन चैतन्यमिवोष्णरश्मेः ॥4॥

तवार्हतो नाभिगमेन तृप्तं
मनो नियोगक्रिययोत्सुकं मे।
अप्याज्ञया शासितुरात्मना वा
प्राप्तोऽसि सम्भावयितुं वनान्माम् ॥5॥

इत्यर्घ्यपात्रानुमितव्ययस्य
रघोरुदारामपि गां निशम्य।
स्वार्थोपपत्तिं प्रति दुर्बलाश-
स्तमित्यवोचद्वरतन्तुशिष्यः ॥6॥

सर्वत्र नो वार्तमवेहि राजन्!
नाथे कुतस्त्वय्यशुभं प्रजानाम्।
सूर्ये तपत्यावरणाय दृष्टेः
कल्पेत लोकस्य कथं तमिस्रा ॥7॥

शरीरमात्रेण नरेन्द्र तिष्ठन्
आभासि तीर्थप्रतिपादितर्द्धिः।
आरण्यकोपात्तफलप्रसूतिः
स्तम्बेन नीवार इवावशिष्टः ॥8॥

तदन्यतस्तावदनन्यकार्यो
गुर्वर्थमाहर्तुमहं यतिष्ये।
स्वस्त्यस्तु ते निर्गलिताम्बुगर्भं
शरद्घनं नार्दति चातकोऽपि ॥9॥

एतावदुक्त्वा प्रतियातुकामं
शिष्यं महर्षेर्नृपतिर्निषिध्य ।
किं वस्तु विद्वन्! गुरवे प्रदेयं
त्वया कियद्वेति तमन्वयुङ्क्त ॥10॥

ततो यथावद्विहिताध्वराय
तस्मै स्मयावेशविवर्जिताय ।
वर्णाश्रमाणां गुरवे स वर्णी
विचक्षणः प्रस्तुतमाचचक्षे ॥11॥

समाप्तविद्येन मया महर्षि-
र्विज्ञापितोऽभूद गुरुदक्षिणायै ।
स मे चिरायास्खलितोपचारां
तां भक्तिमेवागणयत्पुरस्तात् ॥12॥

निर्बन्धसञ्जातरुषार्थकार्श्य-
मचिन्तयित्वा गुरुणाहमुक्तः ।
वित्तस्य विद्यापरिसंख्यया मे
कोटीश्चतस्रो दश चाहरेति ॥13॥

इत्थं द्विजेन द्विजराजकान्ति-
रावेदितो वेदविदां वरेण ।
एनोनिवृत्तेन्द्रियवृत्तिरेनं
जगाद भूयो जगदेकनाथः ॥14॥

गुर्वर्थमर्थी श्रुतपारदृश्वा
रघोः सकाशादनवाप्य कामम् ।
गतो वदान्यान्तरमित्ययं मे
मा भूत्परीवादनवावतारः ॥15॥

स त्वं प्रशस्ते महिते मदीये
वसंश्चतुर्थोऽग्निरिवाग्न्यगारे ।
द्वित्राण्यहान्यर्हसि सोढुमर्हन्-
यावद्यते साधयितुं त्वदर्थम् ॥16॥

तथेति तस्यावितथं प्रतीतः
प्रत्यग्रहीत्सङ्गरमग्रजन्मा ।
गामात्तसारां रघुरप्यवेक्ष्य
निष्क्रष्टुमर्थं चकमे कुबेरात् ॥17॥

प्रातः प्रयाणाभिमुखाय तस्मै
सविस्मयाः कोषगृहे नियुक्ताः ।
हिरण्मयीं कोषगृहस्य मध्ये
वृष्टिं शशंसुः पतितां नभस्तः ॥18॥

तं भूपतिर्भासुरहेमराशिं
लब्धं कुबेरादभियास्यमानात् ।
दिदेश कौत्साय समस्तमेव
पादं सुमेरोरिव वज्रभिन्नम् ॥19॥

जनस्य साकेतनिवासिनस्तौ
द्वावप्यभूतामभिनन्द्यसत्त्वौ ।
गुरुप्रदेयाधिकनिःस्पृहोऽर्थी
नृपोऽर्थिकामादधिकप्रदश्च ॥20॥

शब्दार्थाः टिप्पणयश्च

विश्वजिति अध्वरे – विश्वजित् नामक यज्ञ में।

कोषजातम् – धन समूह। सम्पूर्ण धनराशि।

विश्राणितम् – प्रदत्तम्; दान में दिया हुआ। वि + श्रणु (दाने) + क्त; दत्तम्।

उपात्तविद्यः – विद्या को प्राप्त किया हुआ। विद्यासम्पन्न।

गुरुदक्षिणार्थी – गुरुदक्षिणा देने की इच्छा से प्रार्थना करने वाला।

प्रपेदे – पहुँचा। प्र + पद् (गतौ) लिट् + प्र.पु. एकवचन

मृण्मये – मिट्टी के बने हुए। मृत् + मयट्।

वीतहिरण्मयत्वात् – सोने के बने हुए पात्रों के न रहने से। हिरण्यस्य विकारः = हिरण्मयम्। वि + इण् + क्त।

निधाय – रखकर। संस्थाप्य। नि + धा + ल्यप्।

अर्घ्यम् – अर्घ निमित्तक द्रव्य। अर्घार्थम् योग्यम् इदं द्रव्यम् अर्घ + यत्।

अनर्घशीलः – असाधारण आचारवान्। महनीय स्वभाववाला। अमूल्यस्वभावः, असाधारण–स्वभावो वा। नञ् + अर्घः। अमूल्यम्।

श्रुतप्रकाशं – वेदादि शास्त्रों के अध्ययन से प्रसिद्ध। श्रुत = शास्त्र। श्रुतेन प्रकाशः। तम्।

श्रुतम् – वेदादि शास्त्र। श्रूयते इति श्रुतं–वेदादिशास्त्रम्। श्रु + क्त।

प्रत्युज्जगाम – पास उठकर गया। प्रति + उत् + गम् + लिट्। प्रथमपुरुष एकवचन।

आतिथेयः – अतिथि सत्कार करने वाला। अतिथये साधुः। अतिथि + ढञ्।

अर्चयित्वा – पूजन करके। अर्च् (पूजायां) + णिच् + क्त्वा। स्वार्थे णिच्।

विधिवत् – शास्त्रोक्त नियमों के अनुरूप। यथाशास्त्रम्। विधि + वत्।

विधिज्ञः – शास्त्रज्ञ। शास्त्र नियमों के वेत्ता।

तपोधनं – ऋषि को। जिसका तप ही धन है। तपः धनं यस्य। बहुब्रीहि समास।

मानधनाग्रयायी – आत्म गौरव को ही धन मानने वालों में अग्रगण्य / अग्रेसर।

विशाम्पतिः – राजा। विश् = प्रजा। पति = स्वामी।

विष्टरभाजाम् – आसन पर / पीठ पर बैठे हुए। विष्टरम् = आसनम् अथवा पीठम्।

आरात्	–	समीप में। दूर और समीप दोनों अर्थों में 'आरात्' पद का प्रयोग होता है। अव्यय।
कृत्यवित्	–	अपने कर्तव्य एवं उत्तरदायित्व को समझने वाला। कृ + यत् + विद् + क्विप्।
उवाच	–	वच (परिभाषणे) धातु, लिट्, प्रथम पुरुष, एकवचन।
मन्त्रकृताम्	–	मन्त्रद्रष्टाओं में। मनन करने वालों में। चिन्तन करने वालों में। प्रथम अर्थ में कृ-धातु का अर्थ है 'दर्शन' न कि निर्माण। ऋषयो मन्त्रद्रष्टारः।
कुशाग्रबुद्धे	–	हे सूक्ष्मदर्शी ! कुशस्य अग्र कुशाग्रं कुशाग्रमिव बुद्धिर्यस्य सः कुशाग्रीयम्। तत्सम्बोधनम्। कुश एक विशेष प्रकार की तीखी नोंक वाली घास होती है, जिसका उपयोग यज्ञ-यागादि में किया जाता है।
अशेषम्	–	सम्पूर्ण। अविद्यमानः शेषः यस्मिन् तत्। न + शेषम्। शेष न रहने तक।
लोकेन	–	लोगों से। समूहवाची पद।
उष्णरश्मिः	–	सूर्य। उष्णः रश्मिः यस्य सः। बहुव्रीहि समास।
आप्तम्	–	प्राप्त किया गया। आप्लृ (व्याप्तौ) + क्त।
अर्हतः	–	प्रशंसा के योग्य का। अर्ह् (पूजायाम्) + शतृ, षष्ठी एकवचन। अर्ह्-धातु से 'प्रशंसा' के अर्थ में ही शतृ प्रत्यय होता है।
अभिगमेन	–	आगमन से।
तृप्तम्	–	सन्तुष्ट। तृप् (प्रीणने) + क्त।
नियोगक्रियया	–	आज्ञा से।
उत्सुकं	–	उत्कण्ठित।
सम्भावयितुम्	–	कृतार्थ करने के लिए। सम् + भू + णिच् + तुमुन्।
अर्घ्यपात्रानुमितव्ययस्य	–	(मृण्मय) अर्घ्यपात्र से ही जिसके सम्पूर्ण धन के व्यय हो जाने का पता लगता है उसका। अर्घ्यस्य पात्रम्। अर्घ्यपात्रेण अनुमितः व्ययः यस्य सः। तस्य = रघोः।

गाम् – वाणी को। गो शब्द अनेकार्थक है। इस स्थान पर वाणी का वाचक है।

निशम्य – सुनकर। नि + शम् + ल्यप्।

स्वार्थोपपत्तिम् – अपने प्रयोजन (कार्य) की सिद्धि को। यहाँ अर्थ शब्द प्रयोजन वाचक है।

दुर्बलाशः – निराश होते हुए; शिथिल मनोरथ होते हुए। दुर्बला आशा यस्य सः।

अवोचत् – बोला। वच् + (परिभाषणे) लङ् प्रथमपुरुष, एकवचन।

वार्तम् – कुशलता, नीरोगता। 'वार्त, स्वास्थ्यम्, आरोग्यम्, अनामयम्' इति पर्यायपदानि।

अवेहि – जानो। अव + इहि (इण् गतौ) लोट् मध्यमपुरुष एकवचन।

सूर्ये तपति (सति) – सूर्य के प्रकाशमान होने पर। सती सप्तमी प्रयोग। तपति – तप + शतृ सप्तमी विभक्ति एकवचन (पुं.)

कथं कल्पेत – कैसे पर्याप्त होगा (समर्थ नहीं होगा) क्लृप् (सामर्थ्ये) विधि लिङ्। प्रथम पुरुष एकवचन।

तमिस्रा – अन्धकार समूह। 'तमिस्रा तु तमस्ततौ'।

शरीरमात्रेण – केवल शरीर से। केवलं शरीरं शरीरमात्रम्। मात्रच् प्रत्यय।

आभासि – सुशोभित हो रहे हो। आ + भा (दीप्तौ) लट् मध्यम पुरुष एकवचन।

तीर्थप्रतिपादितर्द्धिः – सत्पात्रों को सारी सम्पत्ति दान करने वाले। तीर्थे–सत्पात्रे प्रतिपादिता–दत्ता ऋद्धिः–समृद्धिः (सम्पत्) येन सः।

आरण्यकाः – अरण्य में निवास करने वाले मुनिजन आदि अरण्ये भवाः आरण्यकाः।

स्तम्बेन – डांठ (डंठल) मात्र से। तृतीया विभक्ति एकवचन।

नीवारः – धान्य विशेष। जंगल में स्वतः उत्पन्न हुआ धान्य विशेष।

अनन्यकार्यः – जिसे निर्दिष्ट उद्देश्य के अतिरिक्त अन्य कार्य न हो। प्रयोजनान्तर–रहितः। न विद्यते अन्यकार्यं यस्य सः। अन्यच्च तत् कार्यञ्च अन्यकार्यम्।

आहर्तुम् – ग्रहण करने के लिये। आ + हृ (हरणे) + तुम्।

यतिष्ये – प्रयत्न करूँगा। यती (प्रयत्ने) + लृट् उत्तम पुरुष बहुवचन।

निर्गलिताम्बुगर्भं – जिसके गर्भ से जल निकल चुका हो। अम्ब्वेव गर्भः अम्बुगर्भः। निर्गलितः अम्बुगर्भः यस्मात् सः।

शरद्धनम् – शरत् कालिक मेघ।

नार्दति – याचना नहीं करता है। न + अर्दति। अर्द् (गतौ याचने च) लट् प्रथम पुरुष एकवचन।

चातकः – पपीहा (पक्षी विशेष) चातक पक्षी।

प्रतियातुकामम् – लौट जाने की इच्छा वाले को। प्रतियातुं कामः यस्य सः तम्। प्रति + या (प्रापणे) + तुम्। 'तुंकाममनसोरपि' इस अनुशासन से 'तुम्' प्रत्यय के मकार का लोप होता है।

निषिध्य – निवारण कर। निवार्य। नि + षिध् (गत्याम्) + ल्यप्।

प्रदेयम् – देने योग्य। प्र + दा (दाने) + यत्।

कियत् – कितना। किं परिमाणम्?।

अन्वयुङ्क्त – पूछा। अनु + युज् + लङ् प्रथम पुरुष एकवचन। अयुङ्क्त अयुञ्जाताम् अयुञ्जत।

यथावत् – विधिवत्। शास्त्रों के नियमानुरूप।

स्मयावेशविवर्जिताय – जो गर्व के आवेश से वर्जित हो। गर्वाभिनिवेशशून्याय। स्मयः = गर्वः।

वर्णी – ब्रह्मचारी। वर्ण + इन्।

आचचक्षे – कहने लगा था। आ + चक्षिङ् (व्यक्तायां वाचि) लिट् प्रथमपुरुष एकवचन।

गुरवे – नियामक को। प्रजानां नियामकाय।

गुरुदक्षिणायै – गुरुदक्षिणा स्वीकार करने हेतु।

चिराय – चिरकाल से (बहुत वर्षों से/बहुत दिनों से)। यह एक अव्यय है, जिसके अन्त में नाना विभक्तियों के रूप दिखाई पड़ते हैं। जैसे–चिरम्, चिरात्, चिरस्य। ये सभी समानार्थक हैं।

अगणयत्	–	गिन लिया। गण् (संख्याने) + णिच् + लङ्। चुरादि गण।
पुरस्तात्	–	सब से पहले। अव्यय।
निर्बन्धेन	–	बार बार प्रार्थना किये जाने से। प्रार्थनातिशयेन।
अर्थकार्श्यम्	–	अर्थ संकट, दारिद्र्य।
अचिन्तयित्वा	–	बिना सोचे। नञ् + चिती (संज्ञाने) + णिच् + त्वा।
विद्यापरिसङ्ख्यया	–	विद्या की गणना (संख्या) के अनुसार।
आहर	–	लाओ। आ + हृ + लोट्। मध्यम पुरुष एकवचन।
एनोनिवृत्तेन्द्रियवृत्तिः	–	जितेन्द्रिय। पापों से निवृत्त इन्द्रिय वृत्ति वाले। एनः = पाप, अपराध।
जगाद	–	कहा। गद् (व्यक्तायां वाचि) + लिट्। प्रथमपुरुष एकवचन।
श्रुतपारदृश्वा	–	शास्त्रज्ञ, शास्त्रमर्मज्ञ। श्रुतस्य पारं दृष्टवान्। श्रुत + पार + दृश् + क्वनिप्।
सकाशात्	–	पास से। अव्यय।
वदान्यान्तरम्	–	दूसरे दाता। वदान्यः = दानी। अन्यः वदान्यः वदान्यान्तरम्।
माभूत्	–	न होवे। माङ् + अभूत्।
परीवादः	–	निन्दा। 'परिवाद' शब्द भी निन्दार्थक है।
वसन्	–	रहते हुए। वस् (निवासे) + शतृ। प्रथमा विभक्ति, एकवचन।
चतुर्थः अग्निः इव	–	चौथी अग्नि जैसा। दक्षिणाग्नि, गार्हपत्याग्नि और आहवनीयाग्नि नाम से अग्नि के तीन प्रकार हैं।
अग्न्यगारे	–	अग्निशाला में। यज्ञशाला में।
त्वदर्थं साधयितुं यावद्यते	–	तुम्हारा प्रयोजन पूरा करने के लिए यत्न करूँगा। तव + अर्थम्, = त्वदर्थम् यावत् + यते। 'यतिष्ये' इस अर्थ में 'यते' का प्रयोग। यती (प्रयत्ने) + लट्, आत्मनेपदी। उत्तमपुरुष एकवचन।
अवितथम्	–	सत्य। वितथम् = मिथ्या, न वितथम् = अवितथम्।
सङ्गरम्	–	प्रतिज्ञा को। 'संङ्गर' नानार्थक शब्द है।
गाम्	–	भूमि को। अनेकार्थक शब्द।
चकमे	–	इच्छा की। कम् (कान्तौ), लिट्, आत्मनेपदी, प्रथम पुरुष एकवचन।

कोषगृहे	–	खजाने में। 'कोशगृह' पद भी प्रचार में है।
शशंसुः	–	कहा था। कथयामासुः। शंस् + लिट् प्रथम पुरुष बहुवचन।
नभस्तः	–	आकाश की ओर से। नभस् + तसिल्। अव्यय।
भासुरम्	–	चमकते हुए। चमकीला। भास्वरम्।
अभियास्यमानात्	–	आक्रमण किये जाने वाले (कुबेर से)। अभि + या (प्रापणे) + लृट् (कर्मणि) यक् + शानच्। अभिगमिष्यमाणात्।
दिदेश	–	दे दिया। दिश् (अतिसर्जने) लिट् प्रथम पुरुष एकवचन।
सुमेरोः	–	सुमेरु पर्वत का। पुराणों के अनुसार यह स्वर्णमय पर्वत है।
वज्रभिन्नम्	–	वज्रायुध से कटा हुआ। 'वज्र' इन्द्र का आयुध है। उसने वज्रायुध से पर्वतों के पंख काट दिये, ऐसी पौराणिक कथा है।
पादम्	–	गिरिपादः। तलहटी। प्रत्यन्तपर्वतमिव स्थितम्।
अभिनन्द्यसत्त्वौ	–	प्रशंसनीय व्यवहार वाले (दोनों)। अभिनन्द्यं सत्त्वं ययोः तौ।
गुरुप्रदेयाधिकनिःस्पृहः	–	गुरु को देने से अधिक द्रव्य को लेने में इच्छा न रखने वाला (अर्थी)
अधिकप्रदः	–	अधिक देने वाला। अधिकं प्रददाति इति।
साकेतनिवासिनः	–	अयोध्या के निवासी लोग। साकेत + निवास + इन्। षष्ठी विभक्ति एकवचन।

अभ्यासः

1. **संस्कृतभाषया उत्तरं लिखत ।**

(क) कौत्सः कस्य शिष्य आसीत्?

(ख) रघुः कम् अध्वरम् अनुतिष्ठति स्म?

(ग) कौत्सः किमर्थं रघुं प्राप?

(घ) मन्त्रकृताम् अग्रणीः कः आसीत्?

(ङ) तीर्थप्रतिपादितर्द्धिः नरेन्द्रः कथमिव आभाति स्म?

(च) चातकोऽपि कं न याचते?

(छ) कौत्सस्य गुरुः गुरुदक्षिणात्वेन कियद्धनं देयमिति आदिदेश?

(ज) रघुः कस्मात् परीवादात् भीतः आसीत्?

(झ) कस्मात् अर्थं निष्क्रष्टुं रघुः चकमे?

(ञ) हिरण्मयीं वृष्टिं के शशंसुः?

(ट) कौ अभिनन्द्यसत्त्वौ अभूताम्?

2. कोष्ठकात् समुचितं पदमादाय रिक्तस्थानानि पूरयत ।

(क) यशसा .... अतिथिं प्रत्युज्जगाम। (प्रकाशः, कृष्णः, आतिथेयः)

(ख) मानधनाग्रयायी .... तपोधनम् उवाच। (विशाम्पतिः, अकृताञ्जलिः, कौत्सः)

(ग) कुशाग्रबुद्धे! .... कुशली। (ते शिष्यः, ते गुरुः, अग्रणीः)

(घ) हे राजन् सर्वत्र .... अवेहि। (दुःखम्, वार्तम्, असुखम्)

(ङ) स्तम्बेन अवशिष्टः .... इव आभासि। (धान्यम्, नीवारः, वृक्षः)

(च) हे विद्वन्! .... गुरवे कियत् प्रदेयम्। (त्वया, मया, लोकेन)

(छ) .... अचिन्तयित्वा गुरुणा अहमुक्तः (शरीरक्लेशम्, अर्थकार्श्यम्, रोगक्लेशम्)

3. अधोलिखितानां सप्रसङ्गं हिन्दीभाषया व्याख्या कार्या ।

(क) कोटीश्चतस्रो दश चाहर।

(ख) माभूत्परीवादनवावतारः।

(ग) द्वित्राण्यहान्यर्हसि सोढुमर्हन्।

(घ) निष्क्रष्टुमर्थं चकमे कुबेरात्।

(ङ) दिदेश कौत्साय समस्तमेव।

4. अधोलिखितेषु रिक्तस्थानेषु विशेष्य विशेषणपदानि पाठ्यांशात् चित्वा लिखत ।

(क) .... अध्वरे।

(ख) .... कोषजातम्।

(ग) .... अनुमितव्ययस्य।

(घ) .... फलप्रसूतिः।

(ङ) .... विवर्जिताय।

5. विग्रह पूर्वकं समासनाम निर्दिशत –

(क) उपात्तविद्यः (ख) तपोधनः

(ग) वरतन्तुशिष्यः (घ) महर्षिः

(ङ) विहिताध्वराय (च) जगदेकनाथः

(छ) नृपतिः (ज) अनवाप्य

6. अधोलिखितानां पदानां समुचितं योजनं कुरुत –

(अ)	(आ)
(क) ते	(1) चतुर्दश
(ख) चतस्रः दश च	(2) गुरुदक्षिणार्थी
(ग) अस्खलितोपचारां	(3) अहानि
(घ) चैतन्यम्	(4) स्वस्ति अस्तु
(ङ) कौत्सः	(5) प्रबोधः प्रकाशो वा
(च) द्वित्राणि	(6) भक्तिम्

7. प्रकृतिप्रत्ययविभागः क्रियताम् –

(क) अर्थी (ख) मृण्मयम् (ग) शासितुः (घ) अवशिष्टः (ङ) उक्त्वा (च) प्रस्तुतम् (छ) उक्तः (ज) अवाप्य (झ) लब्धम् (ञ) अवेक्ष्य।

8. विभक्ति-लिङ्ग-वचनादिनिर्देशपूर्वकं पदपरिचयं कुरुत –

(क) जनस्य (ख) द्वौ (ग) तौ (घ) सुमेरोः (ङ) प्रातः (च) सकाशात् (छ) मे (ज) भूयः (झ) वित्तस्य (ञ) गुरुणा

9. अधोलिखितानां क्रियापदानाम् अन्येषु पुरुषवचनेषु रूपाणि लिखत –

(क) अग्रहीत् (ख) दिदेश (ग) अभूत् (घ) जगाद (ङ) उत्सहते (च) अर्दति (छ) याचते (ज) अवोचत्

10. अधोलिखितानां पदानां विलोम पदानि लिखत –

(क) नि:शेषम् (ख) असकृत् (ग) उदाराम् (घ) अशुभम् (ङ) समस्तम्

11. अधोलिखितानां पदानां वाक्येषु प्रयोगं कुरुत –

(क) नृपः (ख) अर्थी (ग) भासुरम् (घ) वृष्टिः (ङ) वित्तम् (च) वदान्यः (छ) द्विजराजः (ज) गर्वः (झ) घनः (ञ) वार्तम्

12. अधोलिखितानाम् अन्वयं कुरुत –

(क) स मृण्मये वीतहिरण्मयत्वात् .... आतिथेयः।

(ख) समाप्तविद्येन मया महर्षिः .... पुरस्तात्।

(ग) स त्वं प्रशस्ते महिते मदीये .... त्वदर्थम्।

13. अधोलिखितेषु प्रयुक्तानाम् अलङ्काराणां निर्देशं कुरुत –

(क) 'यतस्त्वया ज्ञानमशेषमाप्तं लोकेन .... चैतन्यमिवोष्णरश्मेः'।।

(ख) शरीरमात्रेण नरेन्द्र! तिष्ठन्न भासि .... इवावशिष्टः।।

(ग) तं भूपतिर्भासुरहेमराशिं .... वज्रभिन्नम्।।

14. अधोलिखितेषु छन्दः निर्दिश्यताम् –

(क) तमध्वरे विश्वजिति क्षितीशं .... वरतन्तुशिष्यः।।

(ख) गुर्वर्थमर्थी श्रुतपारदृश्वा .... नवावतारः।।

(ग) स त्वं प्रशस्ते महिते .... त्वदर्थम्।।

15. 'रघु-कौत्ससंवादं' सरलसंस्कृतभाषया स्वकीयैः वाक्यैः विशदयत।

योग्यताविस्तारः

कालिदासीया काव्यशैली सहृदयानां मनो नितरां रञ्जयति। प्रतिमहाकाव्यं सुललितैः सुमधुरैः प्रसादगुणभरितैः च शब्दसन्दर्भैः मनोहारिणः संवादान् कविः समायोजयति। तत्र हृदयङ्गमाः परिसरसन्निवेशाः आश्रमोपवनादयः, लतागुल्मादयः, शुक-पिक-मयूर-मरन्द-हरिणादयः स्वभावरमणीयाः कविना चित्र्यन्ते।

तादृशाः संवादाः कालिदासीयमहाकाव्ययोः सन्त्यनेके। यथा–रघुवंशे एव द्वितीयसर्गे सिंह–दिलीपयोः संवादे–

'अलं महीपाल तव श्रमेण प्रयुक्तमप्यस्त्रमितो वृथा स्यात्।
न पादपोन्मूलनशक्तिरंहः शिलोच्चये मूर्च्छति मारुतस्य।।''

रघुवंशम् 2.34

सम्बन्धमाभाषणपूर्वमाहुर्वृत्तः स नौ सङ्गतयोर्वनान्ते।
तद्भूतनाथानुग! नार्हसि त्वं सम्बन्धिनो मे प्रणयं विहन्तुम्।।

रघुवंशम् 2.58

कालिदासः उपमालङ्कारप्रियः। तस्य सर्वेषु काव्येषु उपमायाः हृदयहारीणि उदाहरणानि लभ्यन्ते। यथा–

वन्यवृत्तिरिमां शश्वदात्मानुगमनेन गाम्।
विद्यामभ्यसनेनेव प्रसादयितुमर्हसि।।

रघुवंशम् 1.88

अर्घ्यम् – **अर्घ्यम्** इति पदेन अतिथिसत्कारार्थं सङ्ग्राह्यं द्रव्यम् अभिधीयते। भारतीयायाम् अतिथिसत्कार परम्परायाम् एतेषां द्रव्याणां नितरां महत्त्वं वर्तते। तानि द्रव्याणि दूरादागतस्य अतिथिजनस्य अध्वश्रमम् अपनेतुं समर्थानि; अत एव तानि अर्घ्यद्रव्येषु स्थानं भजन्ते। अर्घस्य, अर्घ्यस्य वा द्रव्याणि तु – दूर्वा, अक्षतानि, सर्षपाः, पुष्पाणि सुगन्धीनि, चन्दनादिसुगन्धिद्रव्याणि, स्वादु शीतलं जलञ्च। अर्घः अर्घ्यं वा अतिथीनाम् उपचाराथम्। आदरार्थं वा विधीयत इति याज्ञवलक्यः प्राह। तद्यथा–

'दूर्वा सर्षपपुष्पाणां दत्त्वार्घं पूर्णमञ्जलिम्' इति।

विद्या – प्राचीनकाले चतुर्दश विद्याः पाठ्यन्ते स्म। ताः स्मृतिषु उल्लिखिताः सन्ति। तद्यथा

अङ्गानि वेदाश्चत्वारो मीमांसा न्यायविस्तरः।
पुराणं धर्मशास्त्रं च विद्या ह्येताश्चतुर्दश।।

शिक्षा, व्याकरणं, छन्दः, निरुक्तं, ज्यौतिषं, कल्पः इति षट् वेदाङ्गानि; ऋक्, साम, यजुः, अथर्वण इति चत्वारो वेदाः। वेदार्थविचाराय प्रवृत्तं मीमांसाशास्त्रम्, न्यायविस्तरशब्देन ज्ञायमाना आन्वीक्षिकी, दण्डनीतिः, वार्ता, च; अष्टादश–पुराणानि; धर्मशास्त्रञ्च चतुर्दश–विद्यासु अन्तर्भवन्ति।

मन्त्रः – मन्त्र इति पदं 'मत्रि' (गुप्तभाषणे) धातोः घञ् प्रत्यये कृते निष्पन्नः, ऋषिभिः दृष्टानाम् आनुपूर्वाप्रधानानाम् ऋग्यजुस्सामाथर्वाख्यानां सामान्येन बोधकम्। प्रत्येकं वेदे अन्तर्गतानां मन्त्राणां बोधकतया भिन्नाः भिन्नाः शब्दाः प्रयुज्यन्ते। केवलम् ऋङ्मन्त्रणां कृते 'ऋच' इति साममन्त्राणां 'सामानि' इति, यजुर्मन्त्राणां 'यजूंषि' इति अथर्वमन्त्राणां 'आथर्वा' इति च संज्ञा।

ज्ञानार्थकात् 'मन्' धातोः अपि मन्त्रशब्दस्य व्युत्पत्तिं प्रदर्शयन्ति। ध्यानावस्थायां मन्त्रान् ऋषयः अपश्यन् इति कारणात् ते 'मन्त्रद्रष्टार' इत्युच्यन्ते। सर्वदा मननं कुर्वन्ति, ध्यानमग्ना भवन्ति इति कारणात् ऋषयः मन्त्रकृत इत्यपि उच्यन्ते।

बहुभाषाज्ञानम् – अधोलिखितानाम् अन्यभाषाशब्दानां समानार्थकानि पदानि पाठे अन्वेष्टव्यानि

मेजबान (Host) अगवानी (to receive) जिद (insistance)

विशिष्टवाक्यनिर्माणकौशलम्

'सूर्ये तपति कथं तमिस्रा'–एतत्सदृशानि वाक्यानि निर्मेयानि

1. सूर्ये अस्तम् .... (गम्) चन्द्र उदेति।
2. मयि मार्गे .... (स्था) यानम् आगतम्।
3. तस्मिन् .... (प्रच्छ्) अहम् उत्तरम् अयच्छम्।

अनेकार्थकशब्दः – पाठ्यांशे दृष्टानाम् अनेकार्थकशब्दानां सङ्ग्रहं कृत्वा नाना अर्थान् उल्लिखत।

काव्यसौन्दर्यबोधः – कालिदासस्य अन्येषु काव्येषु – ऋतुसंहार-मेघदूतयोः, मालविकाग्निमित्र-विक्रमौर्वशीयाभिज्ञानशाकुन्तलेषु कुमारसम्भवे च भवद्भिः अवलोकिताः अलङ्कारैः सुशोभिताः श्लोकाः सङ्ग्राह्याः, काव्यसौन्दर्यं च समुपस्थापनीयम्।

चित्रलेखनम् – कालिदासकृतं प्रकृतिचित्रणम्, आश्रमचित्रणं, वृक्षादीनां पशुपक्षिणां च चित्रणं श्लोकोल्लेखनपूर्वकं फलकेषु पत्रेषु वा वर्णैः लेपनीयम्।





तृतीयः पाठः

बालकौतुकम्

प्रस्तुत पाठ करुण रस के अनुपम चितेरे महाकवि भवभूति विरचित "उत्तररामचरितम्" नामक प्रसिद्ध नाटक के चतुर्थ अंक से संकलित किया गया है। राजा राम द्वारा निर्वासिता भगवती सीता के जुड़वाँ पुत्रों लव एवं कुश का महर्षि वाल्मीकि के द्वारा पालन-पोषण किया गया, उन्हें शस्त्रों एवं शास्त्रों की शिक्षा दी गयी तथा स्वरचित रामायण के सस्वर गान का अभ्यास कराया गया। महर्षि वाल्मीकि के आश्रम में अतिथि रूप में पधारे राजर्षि जनक, कौसल्या एवं अरुन्धती खेलते हुए बालकों के बीच एक बालक में राम एवं सीता की छाया देखते हैं। वे उन्हें बुलाकर गोद में बिठाकर वात्सल्य की वर्षा करते हैं। इतने में ही चन्द्रकेतु द्वारा रक्षित राजा राम का अश्वमेधीय अश्व आश्रम में प्रवेश करता है। नगरीय अश्व को देखकर आश्रम के बालकों में कौतूहल उत्पन्न होता है। वे उसे देखने के लिए लव को भी बुला लाते हैं। लव घोड़े को देखते ही जान जाते हैं कि यह अश्वमेधीय घोड़ा है। रक्षकों की घोषणा सुनकर बालक लव घोड़े को आश्रम में ले जाकर बाँधने का आदेश देते हैं। इसका अत्यन्त मार्मिक चित्रण इस पाठ में हुआ है।

(नेपथ्ये कलकलः। सर्वे आकर्णयन्ति)

जनकः : **अये, शिष्टानध्याय इत्यस्खलितं खेलतां बटूनां कोलाहलः।**

कौसल्या : **सुलभसौख्यमिदानीं बालत्वं भवति। अहो, एतेषां मध्ये क एष रामभद्रस्य मुग्धललितैरङ्गैर्दारकोऽस्माकं लोचने शीतलयति?**

अरुन्धती : **कुवलयदलस्निग्धश्यामः शिखण्डकमण्डनो**
वटुपरिषदं पुण्यश्रीकः श्रियैव सभाजयन् ।
पुनरपि शिशुर्भूतो वत्सः स मे रघुनन्दनो
झटिति कुरुते दृष्टः कोऽयं दृशोरमृताञ्जनम् ॥1॥

जनकः : *(चिरं निर्वर्ण्य)* **भोः किमप्येतत्।**
महिम्नामेतस्मिन् विनयशिशिरो मौग्ध्यमसृणो
विदग्धैर्निर्ग्राह्यो न पुनरविदग्धैरतिशयः ।

मनो मे संमोहस्थिरमपि हरत्येष बलवान्
अयोधातुं यद्वत्परिलघुरयस्कान्तशकलः ॥

लवः : *(प्रविश्य, स्वगतम्)* अविज्ञातवयः क्रमौचित्यात् पूज्यानपि सतः कथमभिवादयिष्ये? *(विचिन्त्य)* अयं पुनरविरुद्धप्रकार इति वृद्धेभ्यः श्रूयते। *(सविनयमुपसृत्य)* एष वो लवस्य शिरसा प्रणामपर्यायः।

अरुन्धतीजनकौ : कल्याणिन्! आयुष्मान् भूयाः।

कौसल्या : जात! चिरं जीव।

अरुन्धती : एहि वत्स! *(लवमुत्सङ्गे गृहीत्वा आत्मगतम्)* दिष्ट्या न केवल-मुत्सङ्गश्चिरान्मनोरथोऽपि मे पूरितः।

कौसल्या : जात! इतोऽपि तावदेहि। *(उत्सङ्गे गृहीत्वा)* अहो, न केवलं मांसलोज्ज्वलेन देहबन्धेन, कलहंसघोष- घर्घरानुनादिना स्वरेण च रामभद्रमनुसरति। जात! पश्यामि ते मुखपुण्डरीकम्। *(चिबुक-मुन्नमय्य, निरूप्य, सवाष्पाकूतम्)* राजर्षे! किं न पश्यसि? निपुणं निरूप्यमाणो वत्साया मे वध्वा मुखचन्द्रेणापि संवदत्येव।

जनकः : पश्यामि, सखि! पश्यामि। *(निरूप्य)*

वत्सायाश्च रघूद्वहस्य च शिशावस्मिन्नभिव्यज्यते,
संवृत्तिः प्रतिबिम्बतेव निखिला सैवाकृतिः सा द्युतिः ।
सा वाणी विनयः स एव सहजः पुण्यानुभावोऽप्यसौ
हा हा देवि किमुत्पथैर्मम मनः पारिप्लवं धावति ॥

कौसल्या : जात! अस्ति ते माता? स्मरसि वा तातम्?

लवः : नहि।

कौसल्या : ततः कस्य त्वम्?

लवः : भगवतः सुगृहीतनामधेयस्य वाल्मीकेः।

कौसल्या : अयि जात! कथयितव्यं कथय।

लवः : एतावदेव जानामि।

(प्रविश्य सम्भ्रान्ताः)

बटवः : कुमार! कुमार! अश्वोऽश्व इति कोऽपि भूतविशेषो जनपदेष्वनुश्रूयते, सोऽयमधुनाऽस्माभिः स्वयं प्रत्यक्षीकृतः।

लवः : 'अश्वोऽश्व' इति नाम पशुसमाम्नाये सांग्रामिके च पठ्यते, तद् ब्रूत–कीदृशः?

बटवः : अये, श्रूयताम्–

पश्चात्पुच्छं वहति विपुलं तच्च धूनोत्यजस्रम्
दीर्घग्रीवः स भवति, खुरास्तस्य चत्वार एव ।
शष्पाण्यत्ति, प्रकिरति शकृत्पिण्डकानाम्रमात्रान्
किं व्याख्यानैर्व्रजति स पुनर्दूरमेह्येहि यामः ॥

(इत्यजिने हस्तयोश्चाकर्षन्ति)

लवः : *(सकौतुकोपरोधविनयम्।)* आर्याः! पश्यत। एभिर्नीतोऽस्मि। *(इति त्वरितं परिक्रामति।)*

अरुन्धतीजनकौ : महत्कौतुकं वत्सस्य।

कौसल्या : अरण्यगर्भरूपालापैर्यूयं तोषिता वयं च। भगवति! जानामि तं पश्यन्ती वञ्चितेव। तस्मादितोऽन्यतो भूत्वा प्रेक्षामहे तावत् पलायमानं दीर्घायुषम्।

अरुन्धती : अतिजवेन दूरमतिक्रान्तः स चपलः कथं दृश्यते? *(प्रविश्य)*

बटवः : पश्यतु कुमारस्तावदाश्चर्यम्।

लवः : दृष्टमवगतं च। नूनमाश्वमेधिकोऽयमश्वः।

बटवः : कथं ज्ञायते?

लवः : ननु मूर्खाः! पठितमेव हि युष्माभिरपि तत्काण्डम्। किं न पश्यथ? प्रत्येकं शतसंख्याः कवचिनो दण्डिनो निषङ्गिणश्च रक्षितारः। यदि च विप्रत्ययस्तत्पृच्छत।

बटवः : **भो भोः! किंप्रयोजनोऽयमश्वः परिवृतः पर्यटति?**

लवः : *(सस्पृहमात्मगतम्)* **'अश्वमेध' इति नाम विश्वविजयिनां क्षत्रियाणामूर्जस्वलः सर्वक्षत्रपरिभावी महान् उत्कर्षनिकषः।** *(नेपथ्ये)*

योऽयमश्वः पताकेयमथवा वीरघोषणा ।
सप्तलोकैकवीरस्य दशकण्ठकुलद्विषः ॥

लवः : *(सगर्वम्)*। **अहो! संदीपनान्यक्षराणि।**

बटवः : **किमुच्यते? प्राज्ञः खलु कुमारः।**

लवः : **भो भोः! तत्किमक्षत्रिया पृथिवी? यदेवमुद्घोष्यते?** *(नेपथ्ये)*

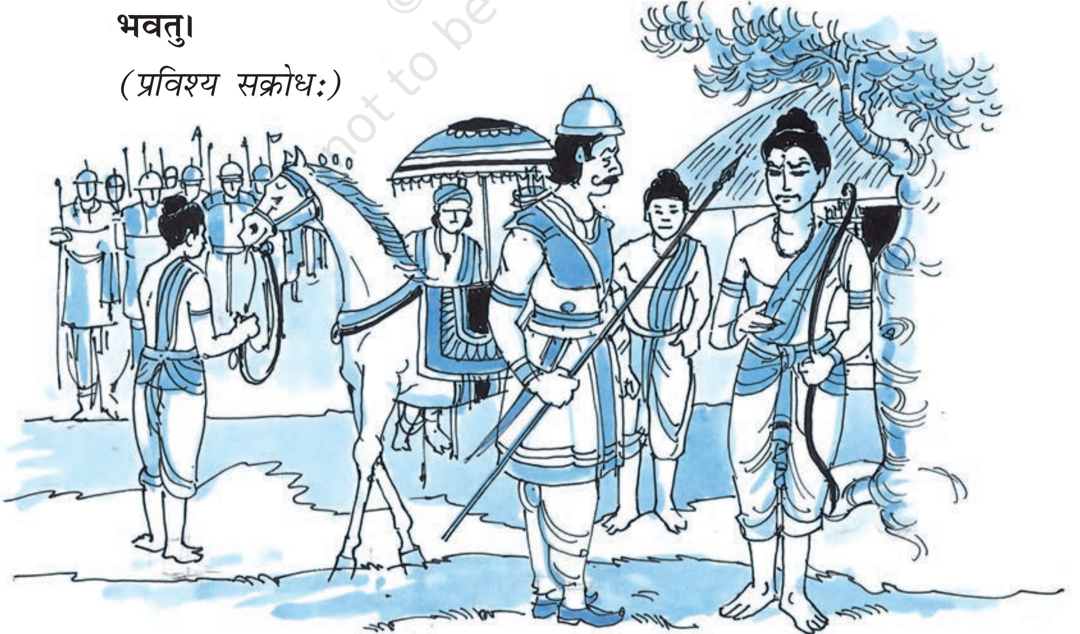
रे, रे, महाराजं प्रति कः क्षत्रियः?

लवः : **धिग् जाल्मान्।**

यदि नो सन्ति सन्त्येव केयमद्य विभीषिका ।
किमुक्तैरेभिरधुना तां पताकां हरामि वः ॥

हे बटवः! परिवृत्य लोष्ठैरभिघ्नन्त उपनयतैनमश्वम्। एष रोहितानां मध्येचरो भवतु।

(प्रविश्य सक्रोधः)



पुरुषः : धिक् चपल! किमुक्तवानसि? तीक्ष्णतरा ह्यायुधश्रेणयः शिशोरपि दृप्तां वाचं न सहन्ते। राजपुत्रश्चन्द्रकेतुर्दुर्दान्तः, सोऽप्यपूर्वारण्यदर्शनाक्षिप्तहृदयो न यावदायाति, तावत् त्वरितमनेन तरुगहनेनापसर्पत।

बटवः : कुमार! कृतं कृतमश्वेन। तर्जयन्ति विस्फारितशरासनाः कुमारमायुधीयश्रेणयः। दूरे चाश्रमपदम्। इतस्तदेहि। हरिणप्लुतैः पलायामहे।

लवः : किं नाम विस्फुरन्ति शस्त्राणि?

(इति धनुरारोपयति)

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

शिष्टानध्यायः – शिष्टेषु (आप्तेषु) अनध्यायः शिष्टागमनप्रयुक्तोऽनध्यायः। बड़े लोगों के आने पर अवकाश।

अस्खलितम् – अनियन्त्रितम्, बेरोकटोक।

सुलभसौख्यम् – सुलभं सौख्यमस्मिन्। इसमें (बचपन में) सुख सुलभ होता है।

मुग्धललितैः – मुग्धैः मनोहरैः ललितैः-सुकुमारैः। मनोहर व सुकुमार।

कुवलयदलस्निग्ध- – कुवलयम्-नीलकमलम् तस्य दलम्-पत्रम्

श्यामः – तस्य इव स्निग्धः-मसृणः श्यामः-कृष्णवर्णः। नील कमल-दल के समान स्निग्ध (चिकना) तथा श्यामवर्ण।

शिखण्डकमण्डनः – काकपक्षशोभितः। काकपक्षों (घुँघराले बालों) से अलङ्कृत।

पुण्यश्रीकः – पुण्या-अलौकिकी श्री शोभा यस्य। अलौकिक शोभा- सम्पन्न।

दृशोरमृताञ्जनम् – दृशोः-नेत्रयोः, अमृताञ्जनम्-अमृतमयम् अञ्जनम्, आँखों में अमृतमय अञ्जन।

विनयशिशिरः – विनयेन-विनम्रतया, शिशिरः-शीतलः। विनय से शीतल (महिम्नामतिशयः का विशेषण)।

मौग्ध्यमसृणः – मौग्ध्येन-मधुरस्वभावतया, मसृणः-कोमलः सर्वभावुक- जनस्पृहणीयः। मधुर स्वभाव के कारण कोमल, स्पृहणीय।

विदग्धैः – सूक्ष्ममतिभिः। विवेकियों के द्वारा।

सम्मोहस्थिरम्	–	सम्मोहेन–शोकाघातेन, स्थिरम्–जडीभूतमिव, सीता निर्वासन के कारण शोकाघात से संज्ञाशून्य सा जड़।
अयस्कान्तशकलः	–	अयस्कान्तधातोः–चुम्बकस्य शकलः–अवयवः (खण्डः), चुम्बक का छोटा–सा टुकड़ा।
अविज्ञातवयःक्रमौचित्यात्	–	अविज्ञातम् वयः क्रमौचित्यम्–अवस्था क्रम (आयु में छोटे बड़े का क्रम) का ज्ञान न होने से।
प्रणामपर्यायः	–	यथाक्रमं प्रणामपरंपरा। औचित्य क्रम के अनुसार प्रणाम।
उत्सङ्गे	–	क्रोडे। गोद में।
मांसलोज्ज्वलेन	–	मांसलेन–परिपुष्टेन बलवता उज्ज्वलेन–प्रकाशयुक्तेन, तेजस्विना। बलिष्ठ और तेजस्वी।
कलहंसघोषघर्घरानुनादिना	–	कलहंसस्य यो घोषः–शब्दः तस्य अनुनादिना–अनुकारिणा। मधुर कण्ठवाले हंस के स्वर का अनुकरण करने वाले (स्वर से)।
मुखपुण्डरीकम्	–	मुखमेव पुण्डरीकम्–श्वेतकमलम्, मुखरूपी कमल।
पुण्यानुभावः	–	पुण्यश्चासौ अनुभावः = पवित्रः–प्रभावः, माहात्म्यम्, पुण्य प्रभाव। "अनुभावः प्रभावे च सतां च मतिनिश्चये।"
अभिव्यज्यते	–	अभि + वि + अञ्ज् धातु + लट् (कर्मवाच्य), प्रथम पुरुष एकवचन, अभिव्यक्त होता है।
उत्पथैः	–	उन्मार्गैः। उन्मार्गों से।
पारिप्लवम्	–	चञ्चलम्।
पशुसमाम्नाये	–	पशुवर्गवर्णनपरे शास्त्रे, पशुशास्त्र में।
सांग्रामिके	–	संग्राम वर्णनपरे शास्त्रे, संग्रामशास्त्र में।
धुनोति	–	धूञ् + लट् + प्रथम पुरुष एकवचन (स्वादिगण, श्नुविकरण), हिलाता रहता है।
अजस्त्रम्	–	निरन्तरम्, लगातार।
दीर्घग्रीवः	–	दीर्घा ग्रीवा यस्य सः, जिसकी गर्दन लम्बी है।
प्रकिरति	–	प्र + कॄ + लट् + प्रथम पुरुष एकवचन (तुदादि, श विकरण), बिखेरता है। त्यागता है।
शकृत्	–	पुरीषम्। मल।

आम्रमात्रान्	–	आम्रफलतुल्यान्। आम के फलों जैसा।
सकौतुकोपरोधविनयम्	–	कौतुकन, उपरोधेन, विनयेन च सहितम्, कौतूहल, आग्रह और विनय के साथ।
अरण्यगर्भरूपालापैः	–	अरण्यगर्भाणां–वननिवासिनां (बालकानां) रूपैः– शरीरसौष्ठवैः, आलापैः–वार्ताभिः। वनवासी बालकों के शरीर सौन्दर्य और बातचीत से।
पलायमानम्	–	परा + अय् + लट् – शानच् आदेश (धातु) "उपसर्गस्यायतो" परा के र् को ल् आदेश द्वितीया एकवचन, दौड़ते हुए को।
दीर्घायुषम्	–	दीर्घम् आयुः यस्य सः दीर्घायुः, तम्। चिरायु को अश्वमेध यज्ञ सम्बन्धी।
निषङ्गिण	–	निषङ्गाः सन्ति येषाम् ते निषङ्गिणः। निषङ्ग + इनि, (पुँ.) प्रथमा विभक्ति बहुवचन। तरकसधारी।
विप्रत्ययः	–	सन्देह, वि + प्रति + इण् धातु + अच् प्रत्यय।
ऊर्जस्वलः	–	ऊर्जोऽस्यास्तीति ऊर्जस्वलः, ऊर्जस् + वलच्। शक्तिशाली।
सर्वक्षत्रपरिभावी	–	समस्त (शत्रु) राजाओं को पराजित करने वाली।
उत्कर्षनिकषः	–	उत्कर्षस्य निकथः, उत्कर्ष की कसौटी।
सप्तलोकैकवीरस्य	–	सप्तलोकेषु एकवीरस्य, सातों लोकों में एकमात्र वीर का।
दशकण्ठकुलद्विषः	–	दशकण्ठस्य कुलं द्वेष्टि इति दशकण्ठकुलद्विट्–तस्य। रावण के कुल के द्वेषी।
सन्दीपनान्यक्षराणि	–	सन्दीपनानि + अक्षराणि। ये अक्षर (कथन) बड़े क्रोधोत्पादक हैं।
लोष्ठैः	–	ढेलों से।
अभिघ्नन्तः	–	अभि + हन् + लट् (शतृ), (पुँ.) प्रथमा विभक्ति बहुवचन, मारते हुए।
रोहितानाम्	–	मृगों के।
अपूर्वारण्यदर्शनाक्षिप्तहृदयः	–	अपूर्वारण्यस्य दर्शनेन आक्षिप्तं हृदयं यस्य सः, बहुव्रीहि समास। अपूर्व वन की शोभा देखने में संलग्न मन वाले।
अपसर्पत	–	अप + सृप् + लोट् + मध्यम पुरुष बहुवचन। भाग जाओ।

विस्फारितशरासनाः – विस्फारितानि शरासनानि यैस्ते। बहुव्रीहि समास। धनुषों को ताने हुए।

हरिणप्लुतैः – हरिणानां प्लुतैरिव प्लुतैः। हरिणों की भाँति कूदते हुए।

पलायामहे – भाग जाएँ। परा + अय् धातु + लट् + उत्तम पुरुष बहुवचन "उपसर्गस्यायतो" से परा के र् को ल्, भाग चलें।

विस्फुरन्ति – वि + स्फुर् + लट् + प्रथम पुरुष बहुवचन, चमक रहे हैं।

आरोपयति – (धनुष) चढ़ाता है।

अभ्यास

1. संस्कृतेन उत्तरं दीयताम् ।

(क) 'उत्तररामचरितम्' इति नाटकस्य रचयिता कः?

(ख) नेपथ्ये कोलाहलं श्रुत्वा जनकः किं कथयति?

(ग) लवः रामभद्रं कथमनुसरति?

(घ) बटवः अश्वं कथं वर्णयन्ति?

(ङ) लवः कथं जानाति यत् अयम् आश्वमेधिकः अश्वः?

(च) राजपुरुषस्य तीक्ष्णतरा आयुधश्रेणयः किं न सहन्ते?

2. रेखाङ्कितपदानि आधृत्य प्रश्ननिर्माणं कुरुत ।

(क) अश्वेमध इति नाम क्षत्रियाणाम् महान् उत्कर्षनिकषः।

(ख) हे बटवः! लोष्ठैः अभिघ्नन्तः उपनयत एनम् अश्वम्।

(ग) रामभद्रस्य एष दारकः अस्माकं लोचने शीतलयति।

(घ) उत्पथैः मम मनः पारिप्लवं धावति।

(ङ) अतिजवेन दूरमतिक्रान्तः स चपलः दृश्यते।

(च) विस्फारितशरासनाः आयुधीयश्रेणयः कुमारं तर्जयन्ति।

(छ) निपुणं निरूप्यमाणः लवः मुखचन्द्रेण सीतया संवदत्येव।

3. हिन्दीभाषया सप्रसङ्गव्याख्यां कुरुत ।

(क) सर्वक्षत्रपरिभावी महान् उत्कर्षनिकषः।

(ख) किं व्याख्यानैर्व्रजति स पुनर्दूरमेह्येहि यामः।

(ग) सुलभसौख्यमिदानीं बालत्वं भवति।

(घ) झटिति कुरुते दृष्टः कोऽयं दृशोरमृताञ्जनम्?

4. अधोलिखितानि कथनानि कः कं प्रति कथयति ।

	कः	कं प्रति
(क) अस्ति ते माता? स्मरसि वा तातम्?	....	....
(ख) दिष्ट्या न केवलमुत्सङ्गः मनोरथोऽपि मे पूरितः।	....	....
(ग) वत्सायाश्च रघूद्वहस्य च शिशावस्मिन्नभिव्यज्यते।	....	....
(घ) सोऽयमधुनाऽस्माभिः स्वयं प्रत्यक्षीकृतः।	....	....
(ङ) इतोऽन्यतो भूत्वा प्रेक्षामहे तावत्पलायमानं दीर्घायुषम्।	....	....
(च) धिक् चपल! किमुक्तवानसि।	....	....

5. अधोलिखितवाक्यानां रिक्तस्थानानि निर्देशानुसारं पूरयत ।

(क) क एष........................रामभद्रस्य मुग्धललितैरङ्गैर्दारकोऽस्माकं लोचने........................ (क्रियापदेन)

(ख) एष .... मे सम्मोहनस्थिरमपि मनः हरति। (कर्तृपदेन)

(ग) ....! इतोऽपि तावदेहि! (सम्बोधनेन)

(घ) 'अश्वोऽश्व' .... नाम पशुसमाम्नाये सांग्रामिके च पठ्यते। (अव्ययेन)

(ङ) युष्माभिरपि तत्काण्डं .... एव हि। (कृदन्तपदेन)

(च) एष वो लवस्य .... प्रणामपर्यायः (करणपदेन)

6. **अधः समस्तपदानां विग्रहाः दत्ताः। उदाहरणमनुसृत्य समस्तपदानि रचयत, समासनामापि च लिखत ।**

उदाहरणम्- पशूनां समाम्नायः, तस्मिन् पशुसमाम्नाये-षष्ठी तत्पुरुषः

(क) विनयेन शिशिरः ....

(ख) अयस्कान्तस्य शकलः ....

(ग) दीर्घा ग्रीवा यस्य सः ....

(घ) मुखम् एव पुण्डरीकम् ....

(ङ) पुण्यः चासौ अनुभावः ....

(च) न स्खलितम् ....

7. **अधोलिखितपारिभाषिकशब्दानां समुचितार्थेन मेलनं कुरुत ।**

(क) नेपथ्ये	(क) प्रकटरूप में
(ख) आत्मगतम्	(ख) देखकर
(ग) प्रकाशम्	(ग) पर्दे के पीछे
(घ) निरूप्य	(घ) अपने मन में
(ङ) उत्सङ्गे गृहीत्वा	(ङ) प्रवेश करके
(च) प्रविश्य	(च) अपने मन में
(छ) सगर्वम्	(छ) गोद में बिठा कर
(ज) स्वगतम्	(ज) गर्व के साथ

8. **पाठमाश्रित्य हिन्दीभाषया लवस्य चारित्रिकवैशिष्ट्यं लिखत ।**

9. **अधोलिखितेषु श्लोकेषु छन्दोनिर्देशः क्रियताम्-**

(क) महिम्नामेतस्मिन् विनयशिशिरो मौग्ध्यमसृणो।

(ख) वत्सायाश्च रघूद्वहस्य च शिशावमिस्मन्नभिव्यज्यते।

(ग) पश्चात्पुच्छं वहति विपुलं तच्च धुनोत्यजस्रम्।

10. **पाठमाश्रित्य उत्प्रेक्षालङ्कारस्य उपमालङ्कारस्य च उदाहरणं लिखत ।**

योग्यताविस्तारः

(क) भवभूतिः संस्कृतसाहित्यस्य प्रमुखो महाकविरासीत्।

''कविर्वाक्पतिराजश्रीभवभूत्यादिसेवितः।

जितो ययौ यशोवर्मा तद्गुणस्तुतिवन्दिताम्।।'' इति कल्हणरचितराजतरङ्गिणीस्थश्लोकेन परिज्ञायते यदयम् अष्टमशताब्द्यां वर्तमानस्य कान्यकुब्जेश्वरस्य यशोवर्मणः समसामयिक आसीत्।

अनेन महाकविना त्रीणि नाटकानि रचितानि–

मालतीमाधवम्, महावीरचरितम् उत्तररामचरितं च।

उत्तररामचरितं भवभूतेः सर्वोत्कृष्टा रचनास्तीति विद्वत्समुदाये इयमुक्तिः प्रसिद्धा वर्तते

''उत्तरे रामचरिते भवभूतिर्विशिष्यते।''

अस्य नाटकस्य कथावस्तु रामायणाधारितमस्ति। अत्र श्रीरामस्य राज्याभिषेकानन्तरमुत्तरं चरितं वर्णितम्, पूर्वचरितन्तु भवभूतिविरचिते महावीरचरिते प्रतिपादितम्। अत एव उत्तरं रामस्य चरितं यस्मिन् तत् उत्तररामचरितम्। अथवा उत्तरम् = उत्कृष्टं रामस्य चरितं यस्मिन् तत् उत्तररामचरितम् इति नाटकस्य नामकरणं समीचीनं वर्तते। सीतापरित्यागेनात्र रामस्योत्कृष्टराज्यधर्मपालनव्रतत्वं सूच्यते।

यद्यपि भवभूतिः करुणरसस्याभिव्यक्तये सविशेषं प्रशस्यते, परन्तु प्रस्तुते नाट्यांशे वात्सल्यस्य भावः मर्मस्पृशं प्रकटितः। तथैव हास्यरसस्यापि रुचिरा अभिव्यक्तिरत्र सञ्जाता।

(ख) **अश्वमेधः** – अश्वमेधयज्ञः प्राचीनकाले राज्यविस्ताराय राष्ट्र-समृद्धये च करणीयः यज्ञः आसीत्। अस्मिन् यज्ञे राज्ञां बलस्य पराक्रमस्य च परीक्षा भवति स्म। यज्ञकर्ता नृपः स्वराष्ट्रियप्रतीकमश्वं च सैन्यबलैः सह भूमण्डल-भ्रमणाय प्रेषयति स्म। यो नृपः स्वराज्ये समागतमश्वं निर्बाधं गन्तु प्रादिशत्, स यज्ञकर्त्रे राज्ञे करदेयतां स्वीकरोति स्म। यः तमश्वमरुणत् स आश्वमेधिक-नृपस्याधीनतां नाङ्गीकरोति स्म। तदा उभयोर्बलयोर्मध्ये युद्धं भवति स्म तत्रैव च नृपाणां पराक्रमः परीक्ष्यते स्म। शतपथब्राह्मणे राष्ट्रार्थे प्रयुक्तम्–

'राष्ट्रं वै अश्वः' इति।

(ग) 'बालकौतुकम्' इतिपाठस्य साभिनयं नाट्यप्रयोगं कुरुत।

(घ) गुरुकुलपरम्परायां बालकानां कृते गुरून् प्रति अभिवादनस्य कीदृशः शिष्टाचारः अत्र चित्रितः इति निरूप्यताम्। तथैव गुरवः कथम् आशीर्वचांसि अयच्छन् इत्यपि ज्ञेयम्।


12078CH04

चतुर्थः पाठः

कर्मगौरवम्

प्रस्तुत पाठ, श्रीमद्भगवद्गीता के द्वितीय एवम् तृतीय अध्यायों से संगृहीत है। श्रीमद्भगवद्गीता वह विश्वप्रसिद्ध ग्रन्थरत्न है, जिसमें श्रीकृष्ण ने विषादग्रस्त अर्जुन को कर्त्तव्य का उपदेश देकर धर्मरक्षार्थ युद्ध के लिए प्रेरित किया था। कर्मों में कुशलता को ही योग बताया गया है। अतः सभी को निःसंगभाव से सदा सर्वहित के कार्यों में संलग्न रहना चाहिए। यही उपनिषदों का भी सन्देश है-कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः।



बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदुष्कृते।
तस्माद्योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम् ॥1॥

नियतं कुरु कर्म त्वं कर्म ज्यायो ह्यकर्मणः।
शरीरयात्रापि च ते न प्रसिद्ध्येदकर्मणः ॥2॥

न कर्मणामनारम्भान्नैष्कर्म्यम् पुरुषोऽश्नुते।
न च सन्न्यसनादेव सिद्धिं समधिगच्छति ॥3॥

न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्।
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः ॥4॥

तस्मादसक्तः सततं कार्यं कर्म समाचर।
असक्तो ह्याचरन्कर्म परमाप्नोति पूरुषः ॥5॥

कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः।
लोकसङ्ग्रहमेवापि सम्पश्यन्कर्तुमर्हसि ॥6॥

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते ॥7॥

न बुद्धिभेदं जनयेदज्ञानां कर्मसङ्गिनाम्।
जोषयेत्सर्वकर्माणि विद्वान्युक्तः समाचरन् ॥8॥

यदृच्छालाभसन्तुष्टो द्वन्द्वातीतो विमत्सरः।
समः सिद्धावसिद्धौ च कृत्वापि न निबध्यते॥9॥

सुखदुःखसमे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ।
ततो युद्धाय युज्यस्व नैवं पापमवाप्स्यसि॥10॥

अनाश्रितः कर्मफलं कार्यं कर्म करोति यः।
स सन्यासी च योगी च न निरग्निर्न चाक्रियः॥11॥

सक्ताः कर्मण्यविद्वांसो यथा कुर्वन्ति भारत।
कुर्याद्विद्वांस्तथाऽसक्तश्चिकीर्षुर्लोकसंग्रहम्॥12॥

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि॥13॥

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

जहातीह	–	जहाति+इह, हा धातु+लट्+प्रथम पुरुष एकवचन, यहाँ, (इस लोक में) त्याग देता है।
सुकृतदुष्कृते	–	सुकृतं च दुष्कृतं च, द्वन्द्व समास, पुण्य और पाप।
युज्यस्व	–	युज् धातु (आत्मनेपद)+लोट्+मध्यम पुरुष एकवचन, प्रयत्न करो।
आस्थिताः	–	आङ्+स्था धातु+क्त, प्रथम पुरुष बहुवचन, प्राप्त हुए थे।
लोकङ्ग्हमेवापि	–	लोकसंग्रहम्+एव+अपि, लोकसंग्रह को भी।
अर्हसि	–	अर्ह् धातु+लट्+मध्यम पुरुष एकवचन, योग्य हो।
आचरति	–	आङ्+चर् धातु+लट्+प्रथम पुरुष एकवचन, आचरण करता है।
इतरः	–	अन्य लोग, सब लोग।
अनुवर्तते	–	अनु+वृत् धातु+लट्+प्रथम पुरुष एकवचन, अनुसरण करता है।
न जनयेत्	–	जन् धातु+णिच्+विधिलिङ्+प्रथम पुरुष एकवचन, उत्पन्न नहीं करना चाहिए।
कर्मसङ्गिनाम्	–	कर्म मे आसक्त मनुष्यों का।
जोषयेत्	–	जुष् धातु+णिच्, विधिलिङ्+प्रथम पुरुष एकवचन, करवाना चाहिए, लगना चाहिए।
कुरु	–	डुकृञ्+(परस्मैपद) लोट्+मध्यम पुरुष एकवचन, करो।
ज्यायः	–	प्रशस्य+ईयसुन्, नपुं + प्रथम विभक्ति एकवचन, श्रेष्ठ है।
ह्यकर्मणः	–	हि+अकर्मणः, क्योंकि कर्म न करने से।
शरीरयात्रापि	–	लौकिकव्यवहारः (शरीरयात्रा+अपि) शरीर–निर्वाह भी।
प्रसिद्ध्येदकर्मणः	–	प्रसिद्ध्येत्+अकर्मणः,कर्म न करने से सिद्ध नहीं होगा।
कर्मणामनारम्भान्नैष्कर्म्यम्	–	कर्मणाम्+अन्+आरम्भात्+नैष्कर्म्यम्, कर्मों का आरम्भ किये बिना निष्कर्मता को।

अश्नुते	–	अश् लट् प्रथम पुरुष एकवचन, प्राप्त करता है।
समधिगच्छति	–	सम्+अधि+गम् धातु+लट्+प्रथम पुरुष एकवचन, प्राप्त करता है।
जातु	–	(अव्यय), कभी।
न तिष्ठत्यकर्मकृत्	–	तिष्ठति+अकर्मकृत्, कर्म किये बिना नहीं रहता।
समाचर	–	सम्+आङ्+चर् धातु+लोट् मध्यम पुरुष एकवचन, भलीभाँति करो।
असक्तः	–	सञ्ज् धातु+क्त सक्तः न सक्तः असक्तः, नञ् तत्पुरुष समास, अनासक्त होकर।
आचरन्	–	आङ्+चर्+शतृ, प्रथमा एकवचन, करता हुआ।
आप्नोति	–	आप् धातु+लट्+प्रथम पुरुष एकवचन, प्राप्त करता है।
चिकीर्षु	–	कर्त्तुम् इच्छुः, डूकृञ् धातु सन् प्रत्यय (सनाद्यन्ताधातवः)करने का इच्छुक।
असक्तः	–	सञ्ज् परिज़्वङ्गे, न सक्तः असक्तः, उदासीन, अनासक्त, न लगा हुआ।
अनाश्रितः	–	अन्–आ श्रि श्रयणे, प्रथम पुरूष, एकवचन, सहारे न रहने वाला, आसरा न चाहने वाला।
निरग्निः	–	निर्–अभाव, अग्नि, अग्नि रहित।
यदृच्छालाभः	–	जो कुछ भी मिल जाए।
द्वन्द्वातीतः	–	द्विष्ठाब्दस्य द्वित्वम् पूर्वपदस्य अभावः, उत्तरपदस्य नपुंसकत्व, अति+इ+क्त (द्वन्द्वान् अतीतः) सुख–दुख, हानि–लाभ से परे।
विमत्सरः	–	विगतः मत्सरो यस्य, ईर्ष्या से मुक्त।
सिद्धावसिद्धौ	–	(सिध्+क्त) सिद्धौ असिद्धौ च, सफलता और असफलता में।
निबध्यते	–	(नि+बंध्+क्त) आत्मनेपदम्, एकवचने, कसकर बंधा या बाँधा जाता है।
लाभालाभौ	–	(लभ्+घञ्) लाभः च अलाभः च, लाभ–हानि
युज्यस्व	–	युज् योगे, युक्त हो जा, लग जा।
कर्मण्येवाधिकारस्ते	–	(कृ+मनिन्) सप्तमी विभक्ति एकवचने कर्मणि, एव अधिकारः ते, कर्म में ही तुम्हारा अधिकार है।
सङ्गोऽस्त्वकर्मणि	–	सङ्गः अस्तु अकर्मणि, (सञ्ज् भावे घञ्–सङ्गः) अकर्म के प्रति लगाव, दोस्ती।

अभ्यासः

1. **संस्कृतभाषया उत्तरत ।**

(क) अयं पाठः कस्मात् ग्रन्थात् सङ्कलितः?
(ख) अकर्मणः किं ज्यायः?
(ग) जनकादयः केन सिद्धिम् आस्थिताः?
(घ) लोकः कम् अनुवर्तते?
(ङ) बुद्धियुक्तः अस्मिन् संसारे के जहाति?
(च) केषाम् अनारम्भात् पुरुषः नैष्कर्म्यं प्राप्नोति?
(छ) कः सन्यासी कथ्यते?
(ज) लोक संग्रहम् चिकीर्षु विद्वान् किं कुर्यात्?
(झ) जनः किं कृत्वापि न निबध्यते?

2. **नियतं कुरु कर्म त्वं ..... प्रसिद्ध्येदकर्मणः अस्य श्लोकस्य भावार्थं कुरुत ।**

3. **'यद्यदाचरति ..... लोकस्तदनुवर्तते' अस्य श्लोकस्य अन्वयं लिखत ।**

4. **अधोलिखितानां शब्दानां विलोमान् पाठात् चित्वा लिखत ।**

यथा- वशः – अवशः

(क) बुद्धिहीनः – ....
(ख) दुष्कृतम् – ....
(ग) अकौशलम् – ....
(घ) न्यूनः – ....
(ङ) कर्मणः – ....
(च) दुर्गुणैः – ....
(छ) कदाचित् – ....
(ज) निकृष्टः – ....
(झ) लाभः – ....

(ङ) सक्तः – ....

(ट) सक्रियः – ....

(ठ) असन्तुष्ट – ....

5.अ. अधोलिखतेषु पदेषु सन्धिविच्छेदं कुरुत ।

जहातीह, ह्यकर्मणः, शरीरयात्रापि, पुरुषोऽश्नुते, तिष्ठत्यकर्मकृत्, प्रकृतिजैर्गुणैः, कर्मणैव, लोकस्तदनुवर्तते, जनयेद्ज्ञानाम्, कृत्वापि, कर्मण्यविद्वांसः, सङ्गोऽस्त्वकर्मणि

आ. अधोलिखितक्रियापदानां लकारपुरुषवचननिर्देशं कुरुत ।

जहाति, युज्यस्व, कुरु, अश्नुते, समधिगच्छति, तिष्ठति, आप्नोति, अनुवर्तते, जनयेत्, जोषयेत्।

6. अधोलिखतवाक्येषु रेखाङ्कितपदानां विभक्तीनां निर्देशं कुरुत ।

(क) योगः कर्मसु कौशलम्।

(ख) जीवने नियतं <u>कर्म</u> कुरु।

(ग) <u>कर्मणा</u> एव जनकादयः संसिद्धिम् आस्थिताः।

(घ) <u>अकर्मणः</u> कर्म ज्यायः।

(ङ) <u>कर्मणाम्</u> अनारम्भात् पुरुषः नैष्कर्म्यं न अश्नुते।

(च) ततो <u>युद्धाय</u> युज्यस्व

(छ) <u>कर्मणि</u> एव अधिकारस्ते।

(ज) सक्ताः कर्मणि <u>अविद्वांसः</u>

7. प्रदत्तमञ्जूषायाः समुचितपदानां चयनं कृत्वा अधोदत्तशब्दानां प्रत्येकपदस्य त्रीणि समानार्थकपदानि लिखन्तु ।

अनारतम्, मनीषा, गात्रम्, दुष्कर्म, प्राज्ञः, कलुषम्, शेमुषी, अविरतम्, कोविदः, कायः, मतिः, पातकम्, देहः, मनीषी, अश्रान्तम्

(क) विद्वान् ....

(ख) शरीरम् ....

(ग) बुद्धिः ....

(घ) सततम् ....

(ङ) दुष्कृतम् ....

8.अ. कर्म आश्रित्य संस्कृतभाषायां पञ्च वाक्यानि लिखत ।

आ. भावस्पष्टं कुरूत–

यदृच्छालाभसन्तुष्टः

चिकीर्षु लोकसंग्रहम्

मा तो सङ्गस्त्वकर्मणि

9. पाठे प्रयुक्तस्य छन्दसः नाम लिखत ।

योग्यताविस्तारः

अधोलिखितानां सूक्तीनामध्ययनं कृत्वा प्रस्तुतपाठेन भावसाम्यम् अवधत्त ।

(1) गच्छन् पिपीलको याति योजनानां शतान्यपि।
अगच्छन्वैनतेयोऽपि पदमेकं न गच्छति।।

(2) उद्यमेन हि सिध्यन्ति कार्याणि न मनोरथैः।
न हि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशन्ति मुखे मृगाः।।

पञ्चतन्त्रम् / मित्रसम्प्राप्ति – 129

(3) कर्मणा जायते सर्वं, कर्मैव गतिसाधनम्।
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन, साधु कर्म समाचरेत्।।

विष्णुपुराण – 1/18/32

(4) चरन्वै मधु विन्दति, चरन् स्वादुमुदम्बरम्।
सूर्यस्य पश्य श्रेमाणं, यो न तन्द्रयते चरन्।।

ऐतरेय ब्राह्मण – 33.3.5

(5) **जलबिन्दुनिपातेन क्रमशः पूर्यते घटः।**
स हेतुः सर्वविद्यानां धर्मस्य च धनस्य च॥

चाणक्यनीति - 12/22

(6) **दुष्कराण्यपि कार्याणि, सिध्यन्ति प्रोद्यमेन वै।**
शिलापि तनुतां याति, प्रपातेनार्णसो मुहुः॥

बुद्धचरितम् - 26/63

(7) **कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः।**
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति, न कर्म लिप्यते नरे॥

यजुर्वेद - 40/2 7

अधोलिखितादर्शवाक्यानि सम्बद्धसंस्थाभिः योजयत ।

आदर्शवाक्यम्	**संस्था**
(क) सत्यमेव जयते	राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
(ख) विद्ययाऽमृतमश्नुते	भारतसर्वकारः
(ग) असतो मा सद्गमय	कतिपयविद्यालयेषु
(घ) सा विद्या या विमुक्तये	केन्द्रीयमाध्यामिक शिक्षा परिषद्
(ङ) योगः कर्मसु कौशलम्	राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद्
(च) गुरुः गुरुतमो धामः	भारतीय प्रशासनिक सेवा अकादमी, मसूरी
(छ) तत्वं पूषन्नपावृणु	डाकतारविभागः
(ज) अहर्निशं सेवामहे	केन्द्रीय विद्यालय संगठन
(झ) श्रम एव जयते	भारतस्य सर्वोच्च न्यायालयः
(ञ) यतो धर्मस्ततो जयः	श्रममंत्रालयः

अधोनिर्मिततालिकां दृष्ट्वा समस्तपदैः सह विग्रहान् मेलयत ।

(2) अ व शः

(4) स र्व क र्मा णि

(5) क र्म र तः

(6) अ ना र म् भा त्

अ क र्म णः

(7) क र्म फ ल हे तुः

(8) श री र या त्रा

(11) अ च र न्

(1) बु द् ध यु क् तः

(10) अ स क् तः

अ ज्ञा ना ना म्

(3) बु द् ध भे द म्

(9) लो क सं ग्र ह म्

(12) क र्म स ङ्ग ना म्

(13) सु कृ त दु ष् कृ ते

विग्रहाः

(1) बुद्ध्या युक्तः (तृतीया तत्पुरुषः)

(2) न वशः (नञ् तत्पुरुषः समास)

(3) बुद्धेः भेदम् (षष्ठी तत्पुरुषः समास)

(4) सर्वाणि कर्माणि (कर्मधारय समास)

(5) कर्मणि रतः (सप्तमी तत्पुरुष समास)

(6) (अ) न कर्मणः (नञ् तत्पुरुष)

(ब) न आरम्भात् (नञ् तत्पुरुष)

(7) कर्मफलस्य हेतुः (षष्ठी तत्पुरुष समास)
(8) शरीरस्य यात्रा (षष्ठी तत्पुरुष समास)
(9) लोकाय संग्रहम् (चतुर्थी तत्पुरुष समास)
(10) (अ) न सक्तः (नञ् तत्पुरुष)
(ब) न ज्ञानानाम् (नञ् तत्पुरुष)
(11) न चरन् (नञ् तत्पुरुष)
(12) कर्मसु सङ्गिनाम् (सप्तमी तत्पुरुष)
(13) सुकृतम् दृष्कृतम् च (द्वन्द्व समास)

श्रीमद्भगवद्गीता

श्रीमद्भगवद्गीता महाभारतस्य भीष्मपर्वणि विद्यते। अत्र सप्तशतश्लोकाः अष्टादशाध्यायेषु उपनिबद्धाः सन्ति। युद्धभूमौ विषादग्रस्तार्जुनाय निष्कामकर्मणः उपदेशं प्रयच्छता भगवता श्रीकृष्णेन अत्र ज्ञान-भक्ति-कर्मणां समन्वयः प्रस्तुतः।

पूर्ववर्तिनः अनेके मनीषिणः जीवने उदात्तगुणानां विकासार्थं गीताशास्त्रेण प्रेरणां प्राप्तवन्तः। तेषु विद्वत्सु लोकमान्यतिलकः, महर्षि अरविन्दः, महात्मागान्धी, विनोबाभावे इत्यादयः प्रमुखाः सन्ति। एतैः विद्वद्भिः गीताशास्त्रस्य स्वभावाभिव्यक्तिस्वरूपाः व्याख्याः विलिखिताः। गीताशास्त्रस्य ज्ञान-भक्ति-कर्मयोगान् स्वजीवने अवतारयन्तः उन्नतादर्शान् उदात्तजीवनमूल्यान् एते मनीषिणः चरितार्थयन्ति स्म।

श्रीमद्भगवद्गीतायाः केचन अन्येऽपि श्लोका उद्धरणीयाः। तद्यथा-

योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जयः।
सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते॥

न हि कश्चित् क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्।
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः॥

सन्यासः कर्मयोगश्च निःश्रेयशकरावुभौ।
तयोऽस्तु कर्मसन्यासात्कर्मयोगो विशिष्यते॥

कर्मण सुकृतस्याहुः सात्विकं निर्मलं फलम्।
रजसस्तु फलं दुखमज्ञानं तमसः फलम्॥

एवं ज्ञात्वा कृतं कर्म पूर्वैरपि मुमुक्षुभिः।
कुरु कर्मैव तस्मात्त्वं पूर्वैः पूर्वतरं कृतम्॥

अनेकैः कविभिः गीतायाः महत्त्वं प्रतिपादितम्। तन्महत्त्वं यत्र-तत्र अध्येतव्यम्। उदाहरणार्थम्-

मलनिर्मोचनं पुंसां जलस्नानं दिने दिने।
सकृद्गीताम्भसि स्नानं संसारमलनाशनम्॥

अधोलिखितानां पदानामाशयोऽन्वेष्टव्यः-

लोकसङ्ग्रहम्, नैष्कर्म्यम्, प्रकृतिजः, सन्न्यसनम्





पञ्चमः पाठः

शुकनासोपदेशः

महाकवि बाणभट्ट संस्कृत के सर्वाधिक प्रतिभाशाली गद्यकार हैं। इन्होंने कान्यकुब्ज (कन्नौज) के राजा हर्षवर्धन के जीवन पर 'हर्षचरित' लिखा है। हर्षवर्द्धन का राज्यकाल 606 ई. से 648 ई. तक रहा। अत: बाणभट्ट का भी यही समय होना चाहिये। इनकी दो रचनाएँ सुप्रसिद्ध हैं– हर्षचरित और कादम्बरी।

हर्षचरित बाणभट्ट की प्रथम गद्य कृति है। स्वयं बाणभट्ट ने इसे आख्यायिका कहा है। कादम्बरी संस्कृत साहित्य का सर्वोत्कृष्ट गद्य काव्य है। यह 'कथा' श्रेणी का काव्य है। चन्द्रापीड–कादम्बरी तथा पुण्डरीक–महाश्वेता के प्रणय का चित्रण करने वाली कथा 'कादम्बरी' के दो भाग हैं। इसका कथानक जटिल होते हुए भी मनोरम है। इसमें कथा का प्रारम्भ राजा शूद्रक के वर्णन से होता है। शूद्रक के यहाँ चाण्डालकन्या वैशम्पायन नामक शुक को लेकर पहुँचती है। शुक सभा में आत्म–वृत्तान्त सुनाता है। इस ग्रन्थ में तीन–तीन जन्मों की घटनाएँ गुम्फित हैं।

प्रस्तुत पाठ 'कादम्बरी' के शुकनासोपदेशः नामक गद्यांश से लिया गया है। इस अंश का नायक राजकुमार चन्द्रापीड है, जो सत्व, शौर्य और आर्जव भावों से युक्त है। शुकनास एक अनुभवी मन्त्री हैं जो राजकुमार चन्द्रापीड को राज्याभिषेक के पूर्व वात्सल्यभाव से उपदेश देते हैं। वे उसे युवावस्था में सुलभ रूप, यौवन, प्रभुता एवं ऐश्वर्य से उद्भूत दोषों के विषय में सावधान कर देना उचित समझते हैं। इसे युवावस्था में प्रवेश कर रहे समस्त युवकों को प्रदत्त 'दीक्षान्त भाषण' कहा जा सकता है।

एवं समतिक्रामत्सु दिवसेषु राजा चन्द्रापीडस्य यौवराज्याभिषेकं चिकीर्षुः प्रतीहारानुपकरण- सम्भारसंङ्ग्रहार्थमादिदेश। समुपस्थितयौवराज्याभिषेकं च तं कदाचिद् दर्शनार्थमागतमारूढविनयमपि विनीततरमिच्छन् कर्तुं शुकनासः सविस्तरमुवाच–



"तात! चन्द्रापीड! विदितवेदितव्यस्याधीतसर्वशास्त्रस्य ते नाल्पमप्युपदेष्टव्यमस्ति। केवलं च निसर्गत एवातिगहनं तमो यौवनप्रभवम्। अपरिणामोपशमो दारुणो लक्ष्मीमदः। अप्रबोधा घोरा च राज्यसुखसन्निपातनिद्रा भवति, इत्यतः विस्तरेणाभिधीयसे।

गर्भे श्वरत्वमभिनवयौवनत्वम्, अप्रतिमरूपत्वममानुषशक्तित्वञ्चेति महतीयं खल्वनर्थ- परम्परा। यौवनारम्भे च प्रायः शास्त्रजलप्रक्षालन-निर्मलापि कालुष्यमुपयाति बुद्धिः। नाशयति च पुरुषमत्यासङ्गो विषयेषु।

भवादृशा एव भवन्ति भाजनान्युपदेशानाम्। अपगतमले हि मनसि विशन्ति सुखेनोपदेशगुणाः। हरति अतिमलिनमपि दोषजातं गुरूपदेशः गुरूपदेशश्च नाम अखिलमलप्रक्षालनक्षमम् अजलं स्नानम्। विशेषेण तु राज्ञाम्। विरला हि तेषामुपदेष्टारः। राजवचनमनुगच्छति जनो भयात्। उपदिश्यमानमपि ते न शृण्वन्ति। अवधीरयन्तः खेदयन्ति हितोपदेशदायिनो गुरून्।

आलोकयतु तावत् कल्याणाभिनिवेशी लक्ष्मीमेव प्रथमम्। न ह्येवं विधमपरिचितमिह जगति किञ्चिदस्ति यथेयमनार्या। लब्धापि खलु दुःखेन परिपाल्यते। परिपालितापि प्रपलायते। न परिचयं रक्षति। नाभिजनमीक्षते। न रूपमालोकयते। न कुलक्रममनुवर्तते। न शीलं पश्यति। न वैदग्ध्यं गणयति। न श्रुतमाकर्णयति। न धर्ममनुरुध्यते। न त्यागमाद्रियते। न विशेषज्ञतां विचारयति। नाचारं पालयति। न सत्यमवबुध्यते। पश्यत एव नश्यति। सरस्वतीपरिगृहीतं नालिङ्गति जनम्। गुणवन्तं न स्पृशति। सुजनं न पश्यति। शूरं कण्टकमिव परिहरति। दातारं दुःस्वप्नमिव न स्मरति। विनीतं नोपसर्पति। तृष्णां संवर्धयति। लघिमानमापादयति। एवं विधयापि चानया कथमपि दैववशेन परिगृहीताः विक्लवाः भवन्ति राजानः, सर्वाविनयाधिष्ठानतां च गच्छन्ति।

अपरे तु स्वार्थनिष्पादनपरैः दोषानपि गुणपक्षमध्यारोपयद्भिः प्रतारणकुशलैर्धूर्त्तैः प्रतार्यमाणा वित्तमदमत्तचित्ता सर्वजनोपहास्यतामुपयान्ति। न मानयन्ति मान्यान्, जरावैक्लव्यप्रलपितमिति पश्यन्ति वृद्धोपदेशम्। कुप्यन्ति हितवादिने। सर्वथा तमभिनन्दन्ति, तं संवर्धयन्ति, तस्य वचनं शृण्वन्ति, तं बहु मन्यन्ते योऽहर्निशम् अनवरतं विगतान्यकर्त्तव्यः स्तौति, यो वा माहात्म्यमुद्भावयति।

तदतिकुटिलचेष्टादारुणे राज्यतन्त्रे, अस्मिन् महामोहकारिणि च यौवने कुमार! तथा प्रयतेथाः यथा नोपहस्यसे जनैः, न निन्द्यसे साधुभिः, न धिक्क्रियसे गुरुभिः, नोपालभ्यसे सुहृद्भिः, न वञ्च्यसे धूर्तैः, न विडम्ब्यसे लक्ष्म्या, नाक्षिप्यसे विषयैः, नापह्रियसे सुखेन।

इदमेव च पुनः पुनरभिधीयसे–विद्वांसमपि सचेतसमपि, महासत्त्वमपि, अभिजातमपि, धीरमपि, प्रयत्नवन्तमपि पुरुषं दुर्विनीता खलीकरोति लक्ष्मीरित्येता-वदभिधायोपशशाम।

चन्द्रापीडस्ताभिरुपदेशवाग्भिः प्रक्षालित इव, उन्मीलित इव, स्वच्छीकृत इव, पवित्रीकृत इव, उद्भासित इव, प्रीतहृदयो स्वभवनमाजगाम।

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

चिकीर्षुः – करने की इच्छावाला, कर्तुमिच्छुः, कृ + सन् + उ + प्रथमा विभक्ति एकवचन।

विनय – विशिष्ट नय (नीति)

प्रतीहारान् – द्वारपालों को

उपकरणसम्भारसङ्ग्रहार्थम् – आवश्यक सामग्री-समूह के संग्रह के लिए, उपक्रियन्ते एभिः इति उपकरणानि, उपकरणानाम् सम्भारः = उपकरणसम्भारः (षष्ठी तत्पुरुष) उपकरणसम्भारस्य सङ्ग्रहार्थम्। उप + कृ + ल्युट् = उपकरणम्, सम्भारः = सम् + भृ + घञ्।

निसर्गतः – स्वाभाविक रूप से।

अपरिणामोपशमः – वृद्धावस्था में भी न शान्त होने वाला। परिणामे उपशमः परिणामोपशमः। न परिणामोपशमः अपरिणामोपशमः (नञ् तत्पुरुष)।

विदितवेदितव्यस्य – विदितम् वेदितव्यम् येन असौ विदितवेदितव्यः तस्य (बहुव्रीहि), विद् + क्त = विदितम्, विद् + तव्यत् = वेदितव्यम्।

गर्भेश्वरत्वम् – जन्म से प्राप्त प्रभुत्व। गर्भतः एव ईश्वरः = गर्भेश्वरः तस्य भावः गर्भेश्वरत्वम्।

भवादृशा – आप जैसे ही, भवत् + दृश् + क्विप्, प्रथमा विभक्ति।

अपगतमले – दोषरहित होने पर, अपगतः मलः यस्मात् तत् अपगतमलम् तस्मिन् अपगतमले (पञ्चमी तत्पुरुष)

उपदेष्टारः – उपदेश देने वाले, उप + दिश् + तृच् प्रथमा विभक्ति बहुवचन।

अवधीरयन्तः – तिरस्कृत करते हुए, अव + धीर + णिच् + शतृ प्रथमा विभक्ति बहुवचन।

कल्याणाभिनिवेशी – मङ्गल के अभिलाषी, कल्याणे अभिनिवेष्टुं शीलं यस्य स बहुव्रीहि।

परिपाल्यते – रखी जा सकती है, परि + पाल + कर्मणि यक् लट् लकार प्रथम पुरुष एकवचन।

प्रपलायते – भाग जाती है।

वैदग्ध्यम् – पाण्डित्य को, विदग्धस्य भावो वैदग्ध्यम्, विदग्ध + ष्यञ्।

अनुरुध्यते – अनुरोध करती है, अनु + रुध् + लट्, प्रथम पुरुष एकवचन।

अवबुध्यते – जान जाती है।

नोपसर्पति – समीप नहीं जाती, पार्श्वे न गच्छति।

संवर्धयति – बढ़ाती है।

लघिमानमापादयति – निम्नता प्रदान करती है, लघिमानम् = लघोर्भावः लघिमा (लघु + इमनिच्) तम् आपादयति = आ + पद् + णिच् + लट् प्रथम पुरुष एकवचन।

विक्लवाः – विह्वल-विकल।

अध्यारोपयद्भिः – आरोपित करने वाले।

प्रतारणकुशलैः – ठगने में कुशल-निपुण, प्रतारणासु कुशलाः प्रतारणकुशलाः तैः, सप्तमी तत्पुरुष।

प्रतार्यमाणाः – ठगे गये, प्र + तृ + कर्मणि यक् + शानच् + प्रथमा विभक्ति एकवचन।

जरावैक्लव्यप्रलपितम् – वृद्धावस्था की विकलता से निरर्थक वचन के रूप में, जरसः वैक्लव्यं = जरावैक्लव्यम् (षष्ठी तत्पुरुष) तेन प्रलपितम्।

प्रयतेथाः – प्रयत्न करिये। प्र + यत् + लिङ्, मध्यम पुरुष एकवचन।

अभिजातम् – कुलीन को, अभि + जन् + क्त, द्वितीया विभक्ति एकवचन। प्रशस्तं जातं यस्य स अभिजातः तम् अभिजातम्, बहुव्रीहि समास।

अभिधीयसे – कहा जा रहा है अभि + धा + यक् + लट्, मध्यम पुरुष एकवचन।

खलीकरोति – दुष्ट बना देती है। न खलम् अखलं, अखलं खलं करोति इति, खल + च्वि + कृ + लट्, प्रथम पुरुष एकवचन।

उपशशाम – चुप हो गये, उप + शम् + लिट्, प्रथम पुरुष एकवचन।

प्रक्षालित इव	–	पूर्णतया धोये हुए। प्र + क्षाल + क्त, प्रथम पुरुष एकवचन।
अहर्निशम्	–	दिन-रात।
उद्भावयति	–	प्रकट करता है। उद् + भू + णिच् + लट्, प्रथम पुरुष एकवचन।
नोपालभ्यसे	–	उलाहना न दिये जाओ।
नोपहस्यसे जनैः	–	लोगों के द्वारा उपहास के पात्र न बनो, उप + हस् + यक् + लट्, मध्यम पुरुष एकवचन, यहाँ 'उपहस्यसे' क्रिया में कर्मणि यक् प्रत्यय हुआ है। अतः 'जनाः' कर्त्ता के अनुक्त होने से अनुक्त कर्त्ता 'कर्तृकर्मणोस्तृतीया' से तृतीया विभक्ति हो गयी है।

अभ्यासः

1. **संस्कृतेन उत्तरं दीयताम् ।**

(क) लक्ष्मीमदः कीदृशः?

(ख) चन्द्रापीडं कः उपदिशति?

(ग) अनर्थपरम्परायाः किं कारणम्?

(घ) कीदृशे मनसि उपदेशगुणाः प्रविशन्ति?

(ङ) लब्धापि दुःखेन का परिपाल्यते?

(च) केषाम् उपदेष्टारः विरलाः सन्ति?

(छ) लक्ष्म्या परिगृहीताः राजानः कीदृशाः भवन्ति?

(ज) वृद्धोपदेशं ते राजानः किमिति पश्यन्ति?

2. **विशेषणानि विशेष्यैः सह योजयत ।**

विशेषणम्	**विशेष्यम्**
(क) समतिक्रामत्सु	ते
(ख) अधीतशास्त्रस्य	विद्वांसम्
(ग) दारुणो	दिवसेषु

(घ) गहनं तमः दोषजातम्
(ङ) अतिमलिनम् लक्ष्मीमदः
(च) सचेतसम् यौवनप्रभवम्

3. अधोलिखितपदानि स्वरचित-संस्कृत-वाक्येषु प्रयुङ्ध्वम् ।

सङ्ग्रहार्थम्, समुपस्थितम्, विनयम्, परिणमयति, शृण्वन्ति, स्पृशति।

4. अधोलिखितानां पदानां सन्धि-विच्छेदं कुरुत ।

(क) एवातिगहनम् .... + ...
(ख) गर्भेश्वरत्वम् .... + ...
(ग) गुरूपदेशः .... + ...
(घ) ह्येवम् .... + ...
(ङ) नाभिजनम् .... + ...
(च) नोपसर्पति .... + ...

5. प्रकृति-प्रत्ययविभागः क्रियताम् ।

शब्दः	**प्रकृतिः**	**प्रत्ययः**
(क) चिकीर्षुः	....	....
(ख) उपदेष्टव्यम्	....	....
(ग) ईक्षते	....	....
(घ) बुध्यते	....	....
(ङ) निन्द्यसे	....	....
(च) उपशशाम	....	....

6. समासविग्रहं कुरुत ।

(क) अमानुषशक्तित्वम् – ....
(ख) अत्यासङ्गः – ....
(ग) अनार्या – ....

(घ) स्वार्थनिष्पादनपरैः – ....

(ङ) अहर्निशम् – ....

(च) वृद्धोपदेशम् – ....

7. रिक्तस्थानानि पूरयत ।

(क) लक्ष्मीः .... न रक्षति।

(ख) .... दुःस्वप्नमिव न स्मरति।

(ग) सरस्वतीपरिगृहीतं .... ।

(घ) उपदिश्यमानमपि .... न शृण्वन्ति।

(ङ) अवधीरयन्तः .... हितोपदेशदायिनो गुरून्।

(च) तथा प्रयतेथाः .... नोपहस्यसे जनैः।

(छ) चन्द्रापीडः प्रीतहृदयो .... आजगाम।

8. सप्रसङ्गं हिन्दीभाषया व्याख्या कार्या ।

(क) गर्भेश्वरत्वमभिनवयौवनत्वमप्रतिमरूपत्वममानुषशक्तित्वञ्चेति महतीयं खल्वनर्थपरम्परा।

(ख) हरति अतिमलिनमपि दोषजातं गुरूपदेशः।

(ग) विद्वांसमपि सचेतसमपि, महासत्त्वमपि, अभिजातमपि, धीरमपि, प्रयत्नवन्तमपि पुरुषं दुर्विनीता खलीकरोति लक्ष्मीरिति।

योग्यताविस्तारः

'उप' उपसर्गपूर्वकात् अतिसर्जनार्थकात् 'दिश्' धातोः 'घञ्' प्रत्यये उपदेशशब्दः निष्पद्यते। समुचितकार्येषु मित्रं, बन्धुं, आश्रितजनं, विद्यार्थिनं वा सन्मार्गे प्रवर्तयितुं केनचित् हितचिन्तकेन सुहृद्वरेण ज्ञानिना वा दीयमानः परामर्शः मार्गनिर्देशः हितवचनं वा 'उपदेश' इति उच्यते। संस्कृतवाङ्मये लोकप्रबोध कानि सदाचारप्रतिपादकानि च सूत्राणि नाना-ग्रन्थेषु, काव्येषु सुभाषितेषु च समुपलभ्यन्ते। तानि उपदेशसूत्राणि बालकान्, युवकान्, प्रौढान्, वृद्धान् विविधेषु क्षेत्रेषु कार्याणि कुर्वतः च अधिकृत्य सामान्येन प्रकारेण प्रणीतानि सन्ति।

अत्र उद्धृते भागे शुकनासोपदेशाख्ये राजकुमारं चन्द्रापीडं प्रति शुकनासस्य उपदेशः सङ्गृहीतः। तथाहि–ऐश्वर्यं, यौवनं, सौन्दर्यं, शक्तिश्चेति प्रत्येकं अनर्थकारणमिति मत्त्वा चन्द्रापीडम् उपदेष्टुं प्रक्रान्तः शुकनासः। यद्यपि चन्द्रापीडः विनीतः गृहीतविद्यश्च तथापि ऐश्वर्यादिभिः अस्य मनः खलीकृतं न भवेत् इति धिया शुकनासः चन्द्रापीडम् उपदिशति। अतः उपदेशोऽयं न केवलं चन्द्रापीडं प्रति अपितु तन्माध्यमेन सर्वेषां जनानां कृतेऽपि।

पञ्चतन्त्रेऽपि यत्र-तत्र ईदृश एव हृदयङ्गमः उपदेशः प्राप्यते। यौवनादिकारणैः सम्भाव्यमानमनर्थं पञ्चतन्त्रम् एवमुल्लिखति–

यौवनं धनसम्पत्तिः प्रभुत्वमविवेकिता।
एकैकमप्यनर्थाय किमु यत्र चतुष्टयम्॥

महाभारतस्य उद्योगपर्वणः भागे विदुरनीतौ अपि एवमभिहितमस्ति–

अष्टौ गुणाः पुरुषं दीपयन्ति
प्रज्ञा च कौल्यं च दमः श्रुतं च।
पराक्रमश्चाबहुभाषिता च
दानं यथाशक्ति कृतज्ञता च॥
न क्रोधिनोऽर्थो न नृशंसमित्रं
क्रूरस्य न स्त्री सुखिनो न विद्या।
न कामिनो ह्रीरलसस्य न श्रीः
सर्वं तु न स्यादनवस्थितस्य॥

अन्यत्रापि हितोपदेश–नीतिशतकादौ च एवमुपदिष्टम् अस्ति। तत्र-तत्रापि योग्यता विस्तरार्थमवश्यं पठनीयम्।

1. बाणभट्टस्य रीतिः पाञ्चाली रीतिरिति कथ्यते। तस्याः लक्षणम् "शब्दार्थयोः समो गुम्फः पाञ्चालीरीतिरिष्यते"।
2. बाणभट्टस्य गद्ये या लयात्मकता वर्तते, पाठपुरस्सरं तस्याः सन्धानं कार्यम्।

बाणविषयकसूक्तयः प्रशस्तयश्च

1. **बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्।**
2. **केवलोऽपि स्फुरन् बाणः करोति विमदान् कवीन्।**
   किं पुनः क्लृप्तसन्धानः पुलिन्दकृतसन्निधिः॥ (धनपाल–तिलकमञ्जरी)

3. **सुबन्धुर्बाणभट्ट-श्च कविराज इतित्रयः।**
वक्रोक्तिमार्गनिपुणा-श्चतुर्थो विद्यते न वा॥ (मङ्खक-श्रीकण्ठचरित)

4. **श्लेषे केचन शब्दगुम्फविषये केचिद्रसे चापरेऽ-**
लङ्कारे कतिचित्सदर्थविषये चान्ये कथावर्णने।
आः सर्वत्र गभीरधीरकविताविन्ध्याटवी चातुरी-
सञ्चारी कविकुम्भिकुम्भभिदुरां बाणस्तु पञ्चाननः॥ (चन्द्रदेव-शार्ङ्गधरपद्धति)

5. **शब्दार्थयोः समो गुम्फः पाञ्चालीरीतिरिष्यते।**
शीलाभट्टारिकावाचि बाणोक्तिषु च सा यदि॥ (राजशेखर-जल्हण-सूक्तिमुक्तावली)

6. **रुचिरस्वरवर्णपदा रसभावती जगन्मनो हरति।**
सा किं तरुणी? नहि नहि वाणी बाणस्य मधुरशीलस्य॥ (धर्मदास-विदग्धमुखमण्डन)

7. **बाणः कवीनामिह चक्रवर्ती चकास्ति यस्योज्ज्वलवर्णशोभम्।**
एकातपत्रं भुवि पुण्यभूमिवंशाश्रयं हर्षचरित्रमेव॥ (सोड्ढल)

8. **हृदि लग्नेन बाणेन यन्मन्दोऽपि पदक्रमः।**
भवेत्कविकुरङ्गाणां चापलं तत्र कारणम्॥ (त्रिलोचन-शार्ङ्गधरपद्धतिः)

9. **यस्याश्चौरश्चिकुरनिकरः कर्णपूरो मयूरो**
भासो हासः कविकुलगुरुः कालिदासो विलासः।
हर्षो हर्षो हृदयवसतिः पञ्चबाणस्तु बाणः
केषां नैषा कथय कविताकामिनी कौतुकाय॥ (जयदेवः प्रसन्नराघवः)





षष्ठः पाठः

सूक्तिसुधा

संस्कृत साहित्य में सूक्तियों का समृद्ध भण्डार है। सूक्ति का अर्थ है सुन्दर वचन, सुधा का अर्थ है अमृत, सूक्तिसुधा का अर्थ है सुन्दर वचन रूपी अमृत। इस पाठ में पण्डितराज जगन्नाथ, महाकवि माघ, भारवि, प्रसिद्ध नाटककार भवभूति तथा महाकवि भर्तृहरि की सूक्तियाँ संकलित हैं। ये सूक्तियाँ आज भी हमारे जीवन के लिए बहुमूल्य, उपयोगी एवं पथप्रदर्शक हैं। विभिन्न विषयों से सम्बद्ध सूक्तियाँ निश्चित रूप से छात्रों के लिए उपयोगी सिद्ध होंगी।

प्रस्तुत पाठ के प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय श्लोक के रचयिता पण्डितराज जगन्नाथ, चतुर्थ श्लोक के महाकवि माघ, पंचम श्लोक के भवभूति, षष्ठ श्लोक के महाकवि भारवि एवं सप्तम, अष्टम, नवम, दशम, एकादश व द्वादश श्लोकों के रचयिता भर्तृहरि हैं।

अस्ति यद्यपि सर्वत्र नीरं नीरज-राजितम्।
रमते न मरालस्य मानसं मानसं विना ।।1।।

नीरक्षीरविवेके हंसालस्यं त्वमेव तनुषे चेत्।
विश्वस्मिन्नधुनान्यः कुलव्रतं पालयिष्यति कः ।।2।।

तावत् कोकिल विरसान् यापय दिवसान् वनान्तरे निवसन्।
यावन्मिलदलिमालः कोऽपि रसालः समुल्लसति ।।3।।

नालम्बते दैष्टिकतां न निषीदति पौरुषे।
शब्दार्थौ सत्कविरिव द्वयं विद्वानपेक्षते ।।4।।

न किञ्चिदपि कुर्वाणः सौख्यैर्दुःखान्यपोहति।
तत्तस्य किमपि द्रव्यं यो हि यस्य प्रियो जनः।।5।।

सहसा विदधीत न क्रियामविवेकः परमापदां पदम्।
वृणते हि विमृश्यकारिणं गुणलुब्धाः स्वयमेव सम्पदः।।6।।

स्वायत्तमेकान्तगुणं विधात्रा विनिर्मितं छादनमज्ञतायाः।
विशेषतः सर्वविदां समाजे विभूषणं मौनमपण्डितानाम् ।।7।।

विपदि धैर्यमथाभ्युदये क्षमा सदसि वाक्पटुता युधि विक्रमः।
यशसि चाभिरुचिर्व्यसनं श्रुतौ प्रकृतिसिद्धमिदं हि महात्मनाम्।।8।।

पापान्निवारयति योजयते हिताय,
गुह्यं निगूहति गुणान् प्रकटीकरोति।
आपद्गतं च न जहाति ददाति काले,
सन्मित्रलक्षणमिदं प्रवदन्ति सन्तः ।।9।।

मनसि वचसि काये पुण्यपीयूषपूर्णा-
स्त्रिभुवनमुपकारश्रेणिभिः प्रीणयन्तः।
परगुणपरमाणून् पर्वतीकृत्य नित्यं,
निजहृदि विकसन्तः सन्ति सन्तः कियन्तः ।।10।।

केयूराणि न भूषयन्ति पुरुषं हारा न चन्द्रोज्ज्वलाः,
न स्नानं न विलेपनं न कुसुमं नालङ्कृता मूर्धजाः।
वाण्येका समलङ्करोति पुरुषं या संस्कृता धार्यते,
क्षीयन्ते खलु भूषणानि सततं वाग्भूषणं भूषणम् ।। 11।।

यावत्स्वस्थमिदं कलेवरगृहं यावच्च दूरे जरा,
यावच्चेन्द्रियशक्तिरप्रतिहता यावत्क्षयो नायुषः।
आत्मश्रेयसि तावदेव विदुषा कार्यः प्रयत्नो महान्,
प्रोद्दीप्ते भवने च कूपखननं प्रत्युद्यमः कीदृशः ॥12॥

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

नीरजराजितम्	कमलशोभितम्	कमलों से सुशोभित
मरालस्य	हंसस्य	हंस का
मानसम्	मनः मानसरोवरं च	मन एवं मानसरोवर
तनुषे (तन् + आत्मने. लट्, मध्यम पुरुष एकवचन)	विस्तारयसि	विस्तृत कर रहे हो
विरसान्	रसरहितान्	रसरहित (शुष्क)
यापय	व्यतीतं कुरु	व्यतीत करो
निवसन् (नि + वस् + शतृ)	वासं कुर्वन्	निवास करते हुए
रसालः	आम्रपादपः	आम का वृक्ष
दैष्टिकतां	भाग्यत्वं	भाग्यत्व को
निषीदति	अवलम्बते	आश्रय लेता है।
कुर्वाणः (कृ + शानच्)	कुर्वन्	करते हुए
सौख्यैः	सुखपूर्वकैः	सुखों के द्वारा
अपोहति	दूरीकरोति	दूर करता है।
विदधीत (वि उपसर्ग + डुधाञ् (धा) विधिलिङ्, प्रथम पुरुष एकवचन)	कुर्वीत	करो
वृणते	वरणं कुर्वन्ति	वरण करती हैं।
विमृश्यकारिणम्	विचिन्त्यकारिणम्	विचारकर कार्य करने वाले को
स्वायत्तम्	निजाधीनं	स्वयं के अधीन

विधात्रा	ब्रह्मणा	ब्रह्मा के द्वारा
छादनम्	आवरणम्	आवरण
सर्वविदाम्	सर्वज्ञानाम्	सर्वज्ञों के
अभ्युदये	उन्नतौ	उन्नति में
(अभि + उदये, यण् सन्धि)		
सदसि	सभायाम्	सभा में
(सदस् शब्द नपुं. सप्तमी विभक्ति एकवचन)		
वाक्पटुता	वाचि पटुता	वाणी में कुशलता
युधि	युद्धे	युद्ध में
निगूहति	आच्छादयति	छिपाता है
जहाति	त्यजति	छोड़ देता है
वचसि	वाचि	वाणी में
(वचस् सप्तमी विभक्ति एकवचन)		
प्रीणयन्तः	प्रसन्नं कुर्वन्तः	प्रसन्न करते हुए
परगुणपरमाणून्	अन्येषाम् अतिसूक्ष्मान् गुणान्	दूसरों के अति सूक्ष्म गुणों को
पर्वतीकृत्य	विशालतां नीत्वा	बढ़ा-चढ़ाकर
हृदि (हृत् शब्द सप्तमी विभक्ति एकवचन)	हृदये	हृदय में
विकसन्तः	विकासं कुर्वन्तः	खिलते हुए
केयूराणि	विशिष्टाभूषणानि	बाजूबन्ध, भुजबन्ध
मूर्धजाः	केशाः	सिर के बाल
क्षीयन्ते	विनश्यन्ते	नष्ट हो जाते हैं।
कलेवरगृहं	शरीरस्य गृहं (षष्ठी तत्पु.समास)	शरीर
जरा	वृद्धत्वं	बुढ़ापा
प्रोद्दीप्ते	प्रज्ज्वलिते	जलने पर
उद्यमः	परिश्रम	मेहनत

अभ्यासः

1. संस्कृतभाषया प्रश्नोत्तराणि लिखत ।

(क) सर्वत्र कीदृशं नीरम् अस्ति?

(ख) मरालस्य मानसं कं विना न रमते।

(ग) विद्वान् कम् अपेक्षते?

(घ) सत्कविः कौ द्वौ अपेक्षते?

(ङ) यः यस्य प्रियः सः तस्य कृते किं भवति?

(च) सहसा किं न विदधीत?

(छ) विधात्रा किं विनिर्मितम्?

(ज) अपण्डितानां विभूषणं किम्?

(झ) महात्मनां प्रकृतिसिद्धं किं भवति?

(ञ) पापात् कः निवारयति?

(ट) सन्तः कान् पर्वतीकुर्वन्ति?

(ठ) कीदृशं भूषणं न क्षीयते?

(ड) कूपखननं कदा न उचितम्?

2. अधोलिखितपद्यांशानां सप्रसङ्गं हिन्दीभाषया व्याख्या विधेया ।

(क) वृणते हि विमृश्यकारिणं गुणलुब्धाः स्वयमेव सम्पदः।

(ख) क्षीयन्ते खलु भूषणानि सततं वाग्भूषणं भूषणम्।

(ग) प्रोद्दीप्ते भवने च कूपखननं प्रत्युद्यमः कीदृशः।

3. रिक्तस्थानपूर्तिः करणीया ।

(क) सत्कविरिव विद्वान् शब्दार्थौ .... अपेक्षते।

(ख) सन्तः .... प्रवदन्ति।

4. निम्नलिखितश्लोकयोः अन्वयं लिखत ।

यथा– यद्यपि नीरज–राजितं नीरं सर्वत्र अस्ति। (परं) मरालस्य मानसं मानसं विना न रमते।

(क) नीरक्षीरविवेके …………… ।

(ख) विपदि धैर्यमथाभ्युदये …………… ।

5. निम्नलिखितशब्दानाम् अर्थं लिखित्वा वाक्यप्रयोगं कुरुत ।

नीरजम्, रसालः, पौरुषः, विमृश्यकारिणः, जरा।

6. निम्नलिखितशब्दानां सार्थकं मेलनं क्रियताम् ।

(क) मरालस्य	(*i*) आश्रयते
(ख) अवलम्बते	(*ii*) ब्रह्मणा
(ग) अधुना	(*iii*) विशदीकृत्य
(घ) विधात्रा	(*iv*) हंसस्य
(ङ) पर्वतीकृत्य	(*v*) साम्प्रतम्
(च) नीरजं	(*vi*) आम्रः
(छ) रसालः	(*vii*) विभूतयः
(ज) सम्पदः	(*viii*) कमलम्
(झ) यशसि	(*ix*) कीर्त्तौ

7. अधोलिखितशब्दानां पाठात् विलोमपदं चित्वा लिखत ।

(क) मूर्खः ……………

(ख) अप्रियः ……………

(ग) पुण्यात् ……………

(घ) यौवनम् ……………

(ङ) उपेक्षते ……………

8. सन्धिविच्छेदः क्रियताम् ।

(क) नालम्बते – न + ……………

(ख) विश्वस्मिन्नधुनान्यः – विश्वस्मिन् + …………… + अन्यः

(ग) कोऽपि – कः + ...

(घ) चाभिरुचिर्व्यसनं – च + ... + व्यसनम्

(ङ) चन्द्रोज्ज्वलाः – .... + ...

9. **(अ) अधोलिखितशब्दानां समासविग्रहः कार्यः ।**

यथा–नीरज-राजितम् – नीरजैः राजितम्।

(क) अलिमालः

(ख) वाक्पटुता

(ग) चन्द्रोज्ज्वलाः

(घ) अप्रतिहता

(ङ) वाग्भूषणम्

(आ) अधोलिखित-विग्रहपदानां समस्तपदानि रचयत ।

यथा–कुलस्य व्रतं .... कुलव्रतम्

(क) वनस्य अन्तरे ....

(ख) गुणानां लुब्धाः ....

(ग) प्रकृत्या सिद्धम् ....

(घ) उपकारस्य श्रेणिभिः ....

(ङ) आत्मनः श्रेयसि ....

10. **अधोलिखितशब्देषु प्रकृतिप्रत्ययानां विभागः करणीयः ।**

यथा–राजितम् – राज् + क्त

(क) दैष्टिकतां – .... + तल्

(ख) कुर्वाणः – .... + शानच्

(ग) पटुता – पटु + ...

(घ) सिद्धम् – .... + क्त

(ङ) विमृश्य – वि + मृश् + ...

11. अधोलिखितश्लोकेषु छन्दो निर्दिश्यताम् ।

यथा–अस्ति यद्यपि .... ।।अनुष्टुप् छन्दः।

(क) तावत् कोकिल .... समुल्लसति।।

(ख) स्वायत्तमेकान्त .... मौनमपण्डितानाम्।।

(ग) विपदि धैर्यमथा .... महात्मनाम्।।

(घ) पापान्निवारयति .... प्रवदन्ति सन्तः।।

(ङ) केयूराणि न .... भूषणम्।।

12. अधोलिखितपङ्क्तिषु कोऽलङ्कारः? लिख्यताम् ।

(क) शब्दार्थौ सत्कविरिव द्वयं विद्वानपेक्षते।

(ख) वाग्भूषणं भूषणम्।

(ग) निजहृदि विकसन्तः सन्ति सन्तः कियन्तः।

(घ) रमते न मरालस्य मानसं मानसं विना।

(ङ) यावन्मिलदलिमालः कोऽपि रसालः समुल्लसति।

योग्यताविस्तारः

(अ) समानार्थकश्लोकाः ।

1. **हंसः श्वेतो बकः श्वेतः को भेदो बकहंसयोः।**
   नीरक्षीरविवेके तु हंसो हंसो बको बकः।।
2. **महाजनस्य संसर्गः कस्य नोन्नतिकारकः।**
   पद्मपत्रस्थितं वारि धत्ते मुक्ताफलश्रियम्।।
3. **आत्मार्थे जीवलोकेऽस्मिन् को न जीवति मानवः।**
   परं परोपकारार्थं यो जीवति स जीवति।।
4. **अज्ञः सुखमाराध्यः सुखतरमाराध्यते विशेषज्ञः।**
   ज्ञानलवदुर्विदग्धं ब्रह्माऽपि तं नरं न रञ्जयति।।
5. **यावत्स्वस्थो ह्ययं देहो यावन्मृत्युश्च दूरतः।**
   तावदात्महितं कुर्यात् प्राणान्ते किं करिष्यति।।

(ब) छन्दसां लक्षणोदाहरणानि ।

1. **शार्दूलविक्रीडितम्-**

लक्षणम्-''सूर्याश्वैर्मसजास्तताः सगुरवः शार्दूलविक्रीडितम्''।

उदाहरणम्

(*i*) केयूराणि न भूषयन्ति.....। (*ii*) यावत्स्वस्थमिदं कलेवरगृहम्.....।

2. **अनुष्टुप् छन्दः -**

लक्षणम्-''श्लोके षष्ठं गुरुज्ञेयं सर्वत्र लघु पञ्चमम्।
द्विःचतुष्पादयोर्ह्रस्वं सप्तमं दीर्घमन्ययोः॥''

उदाहरणम्

अस्ति यद्यपि सर्वत्र नीरं नीरजमण्डितम्.....।

3. **वसन्ततिलका-**

लक्षणम्-''उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः।''

उदाहरणम्

पापान्निवारयति योजयते हिताय।

4. **उपजातिः-इन्द्रवज्रा उपेन्द्रवज्रा इति वृत्तयोः संयोगेन उपजातिः वृत्तं भवति।**

लक्षणम्-''स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः।
उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौ॥''

उदाहरणम्

स्वायत्तमेकान्तगुणं

5. **मालिनी-**

लक्षणम्-''ननमयययुतेयं मालिनी भोगिलोकैः।''

उदाहरणम्

मनसि वचसि काये पुण्यपीयूषपूर्णा...।

6. **आर्या**

लक्षणम्-''यस्याः प्रथमे पादे द्वादशमात्रास्तथा तृतीयेऽपि।
अष्टादश द्वितीये चतुर्थके पञ्चदश साऽऽर्या॥''

उदाहरणम्

(*i*) नीरक्षीर विवेके ....।

(*ii*) तावत् कोकिल ....।

आर्याच्छन्दसि विशिष्टः लयः गेयता च भवति।
तदनुसारेण आर्यायाः गानस्य अभ्यासः कार्यः।

(स) अधोलिखितानाम् हिन्दीभाषायाः आभाणकानां समानार्थकाः संस्कृत पङ्पंक्तयः अन्वेष्टव्याः-

1. **आग लगने पर कुआँ खोदना**
2. **सबसे भली चुप**
3. **दूध का दूध पानी का पानी**





सप्तमः पाठः

विक्रमस्यौदार्यम्

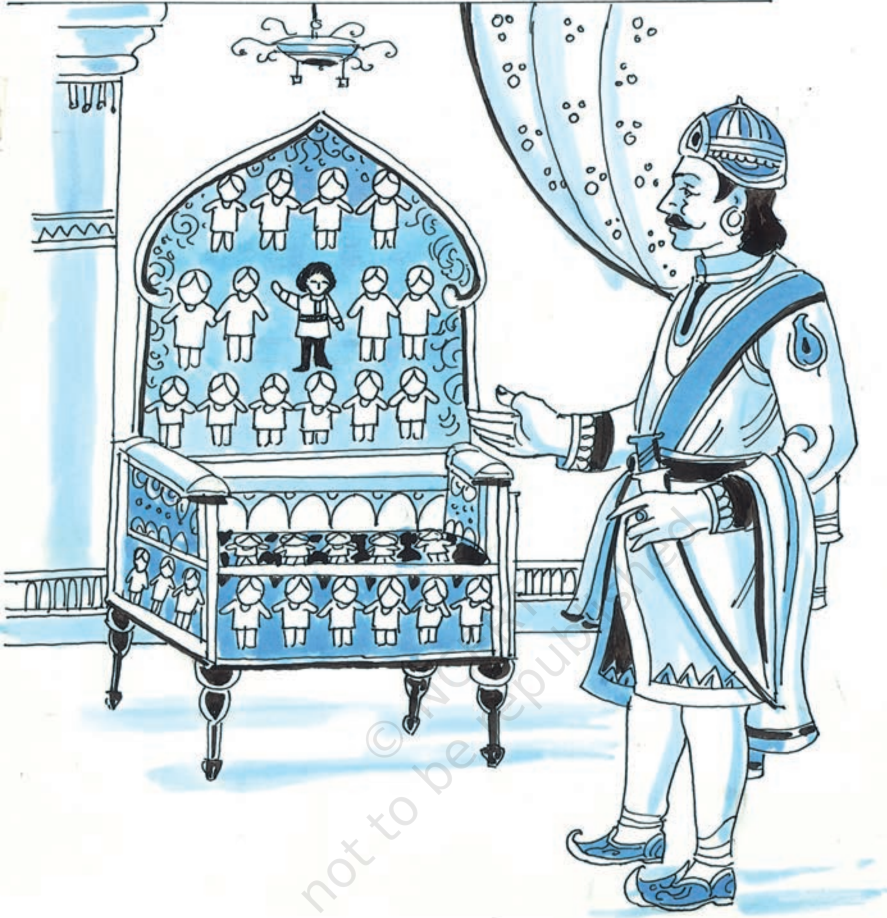
"सिंहासनद्वात्रिंशिका" बत्तीस मनोरञ्जक कथाओं का संग्रह है। इसके केवल गद्यमय, केवल पद्यमय, गद्य–पद्यमय, ये तीन पाठ पाये जाते हैं। संग्रह में स्थित प्रत्येक कथा धारा नगरी के राजा भोज को सुनायी गयी है। अतः इस ग्रन्थ का समय राजा भोज (1018–1063) के अनन्तर ही माना जाता है।

एक टीले की खुदाई करने पर राजा भोज को एक सिंहासन मिला। वह सिंहासन राजा विक्रमादित्य का था। शुभ मुहूर्त में राजा भोज उस सिंहासन पर बैठना चाहता है तो सिंहासन में बनी 32 पुत्तलिकाओं में से प्रत्येक पुत्तलिका राजा विक्रमादित्य के गुणों तथा पराक्रम की एक–एक कथा सुनाकर राजा को सिंहासन पर बैठने से पुनःपुनः रोकती है। प्रत्येक पुत्तलिका ने राजा से यही प्रश्न किया कि 'क्या तुममें विक्रम जैसा गुण है? यदि है तो इस सिंहासन पर बैठ सकते हो अन्यथा नहीं।'

प्रस्तुत पाठ उपर्युक्त 'सिंहासनद्वात्रिंशिका' से ही उद्धृत है। इसमें बताया गया है कि किस प्रकार राजा विक्रम को यह संसार असार प्रतीत होता है। अपने औदार्यवश वे सम्पूर्ण राजकोष को दान करना चाहते हैं। इसके लिए उन्होंने 'सर्वस्वदक्षिणयज्ञ' का अनुष्ठान किया। उस यज्ञ में सब कुछ परित्याग कर दिया। यहाँ तक कि समुद्र की ओर से प्रदान किये गये अद्वितीय चार रत्न भी ब्राह्मण को प्रदान कर दिये। इस प्रकार से विक्रम ने अत्यधिक उदारता का परिचय दिया।

पुनरपि राजा सिंहासने समुपवेष्टुं गच्छति। ततोऽन्या पुत्तलिका समवदत् "भो राजन्, एतत्सिंहासने तेनैव अध्यासितव्यं यस्य विक्रमतुल्यम् औदार्यमस्ति।" भोजेनोक्तम् " भो पुत्तलिके, कथय तस्यौदार्यम्।" सा वदति, "राजन् यस्त्वर्थिनां पूरयति, तस्येप्सितं देवः सम्पादयति।'' यच्चोक्तम्–

उत्साहसम्पन्नमदीर्घसूत्रं क्रियाविधिज्ञं व्यसनेष्वसक्तम् ।
शूरं कृतज्ञं दृढनिश्चयं च लक्ष्मीः स्वयं वाञ्छति वासहेतोः ॥



एवं सकलगुणनिवासः स विक्रमो राजा एकदा स्वमनस्यचिन्तयत्– 'अहो असारोऽयं संसारः, कदा कस्य किं भविष्यतीति न ज्ञायते। यच्चोपार्जितानां वित्तं तदपि दानभोगैर्विना सफलं न भवति। तथा चोक्तम्–

उपार्जितानां वित्तानां त्याग एव हि रक्षणम् ।
तटाकोदरसंस्थानां परीवाह इवाम्भसाम् ।।

अपि च

दातव्यं भोक्तव्यं धनविषये सञ्चयो न कर्त्तव्यः।
पश्येह मधुकरीणां सञ्चितमर्थं हरन्त्यन्ये ।।

इत्येवं विचार्य सर्वस्वदक्षिणं यज्ञं कर्त्तुमुपक्रान्तवान्। ततः शिल्पिभिरतीव मनोहरो मण्डपः कारितः। सर्वापि यज्ञसामग्री समहृता। देवमुनिगन्धर्वयक्षसिद्धादयश्च समाहूताः। तस्मिन्नवसरे समुद्राह्वानार्थं कश्चिद्ब्राह्मणः समुद्रतीरे प्रेषितः। सोऽपि समुद्रतीरं गत्वा गन्धपुष्पादिषोडशोपचारं विधायाब्रवीत् "भोः समुद्र! विक्रमार्को राजा यज्ञं करोति। तेन प्रेषितोऽहं त्वामाह्वातुं समागतः।" इति जलमध्ये पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा क्षणं स्थितः। कोऽपि तस्य प्रत्युत्तरं न ददौ। तत उज्जयिनीं यावत्प्रत्यागच्छति तावद्देदीप्यमानशरीरः समुद्रो ब्राह्मणरूपी सन् तमागत्यावदत् "भो ब्राह्मण, विक्रमेणास्मानाह्वातुं प्रेषितस्त्वं, तर्हि तेन यास्माकं सम्भावना कृता सा प्राप्तैव। एतदेव सुहृदो लक्षणं यत्समये दानमानादि क्रियते।" उक्तं च–

ददाति प्रतिगृह्णाति गुह्यमाख्याति पृच्छति ।
भुङ्क्ते भोजयते चैव षड्विधं प्रीतिलक्षणम् ॥

दूरस्थितानां मैत्री नश्यति समीपस्थानां वर्धते इति न वाच्यम्।

गिरौ कलापी गगने पयोदो लक्षान्तरेऽर्कश्च जले च पद्मम्।
इन्दुर्द्विलक्षे कुमुदस्य बन्धुर्यो यस्य मित्रं न हि तस्य दूरम्॥

तस्मै राज्ञे व्ययार्थं रत्नचतुष्टयं दास्यामि। एतेषां महात्म्यम्-एकं रत्नं यद्वस्तु स्मर्यते तद्ददाति। द्वितीयरत्नेन भोजनादिकममृततुल्यमुत्पद्यते। तृतीयरत्नाच्चतुरङ्गबलं भवति। चतुर्थाद्रत्नाद्दिव्याभरणानि जायन्ते। तदेतानि रत्नानि गृहीत्वा राज्ञो हस्ते प्रयच्छेति।

ततो ब्राह्मणस्तानि रत्नानि गृहीत्वा उज्जयिनीं यावदागतस्तावद्यज्ञसमाप्तिर्जाता। राजावभृथस्नानं कृत्वा सर्वानर्थिजनान् परिपूर्णमनोरथानकरोत्। ब्राह्मणो राजानं दृष्ट्वा रत्नान्यर्पयित्वा प्रत्येकं तेषां गुणकथनमकथयत्। ततो राजावदत्, "भो ब्राह्मण! भवान् यज्ञदक्षिणाकालं व्यतिक्रम्य समागतः। मया सर्वोऽपि ब्राह्मणसमूहो दक्षिणया तोषितः। तर्हि त्वमेतेषां रत्नानां मध्ये यत्तुभ्यं रोचते तद्गृहाणेति। ब्राह्मणेनोक्तम्, 'गृहं गत्वा गृहिणीं, पुत्रं, स्नुषां च पृष्ट्वा सर्वेभ्यो यद्रोचते तद्ग्रहीष्यामीति।' राज्ञोक्तं 'तथा कुरु।' ब्राह्मणोऽपि स्वगृहमागत्य सर्वं वृत्तान्तं तेषामग्रेऽकथयत्। पुत्रेणोक्तं 'यद्रत्नं चतुरङ्गबलं ददाति तद्ग्रहीष्यामः। यतः सुखेन राज्यं कर्त्तुमर्हिष्यामः।' पित्रोक्तं 'बुद्धिमता

राज्यं न प्रार्थनीयम्।' पुनः पिता वदति 'यस्माद्धनं लभते तद् गृहाण। धनेन सर्वमपि लभ्यते।' भार्ययोक्तं 'यद्रत्नं षड्रसान् सूते तद्गृह्यताम्। सर्वेषां प्राणिनामन्नेनैव प्राणधारणं भवति।' स्नुषयोक्तं 'यद्रत्नं रत्नाभरणादिकं सूते तद् ग्राह्यम्।'

एवं चतुर्णां परस्परं विवादो लग्नः। ततो ब्राह्मणो राजसमीपमागत्य चतुर्णां विवादवृत्तान्तमकथयत्। राजापि तच्छ्रुत्वा तस्मै ब्राह्मणाय चत्वार्यपि रत्नानि ददौ। इति कथां कथयित्वा पुत्तलिका राजानमवदत्, 'भो राजन्, त्वय्येवंविध- सहजमौदार्यं विद्यते चेदस्मिन् सिंहासने समुपविश।' तच्छ्रुत्वा राजा तूष्णीमासीत्।

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

पुत्तलिका	–	पुतली
समुपवेष्टुम्	–	सम् + उप + विश् धातु + तुमुन् प्रत्यय बैठने के लिए।
तेनैव	–	तेन + एव, उसी के द्वारा।
अध्यासितव्यम्	–	अधि + आस् धातु + तव्यत् प्रत्यय, बैठना चाहिए।
यस्त्वर्थिनाम्	–	(यः तु अर्थिनाम्), जो याचकों की।
ईप्सितम्	–	ईप्स् धातु + क्त प्रत्यय इच्छित।
शिल्पिन्	–	कारीगर।
यच्चोक्तम्	–	यत् + च + उक्तम्, ऐसा कहा गया है।
समाहूताः	–	सम्यक् आहूताः, आमन्त्रित किये गये।
तटाकोदरसंस्थानाम्	–	तटाकस्य उदरे संस्थानाम् (अवस्थितानाम्) तालाब की गहराई में स्थित।
परीवाह	–	परि + वह् धातु + घञ् प्रत्यय, निकास।
मधुकरीणाम्	–	मधुमक्खियों का।
सर्वस्वदक्षिणम्	–	सर्वस्वं दक्षिणा यस्मिन् तत्। यज्ञ का नाम।
गुह्यमाख्याति	–	गुह्यम् (गोपनीयम्) आख्याति। गोपनीय को कहता है।
कलापी	–	कलापम् अस्ति अस्य, मोर।
लक्षान्तरेऽर्कश्च	–	लाखों योजन, मील की दूरी पर सूर्य भी।

पद्मम्	–	कमल
इन्दुर्द्विलक्षे	–	इन्दुः द्विलक्षे, चन्द्रमा से 2 लाख योजन दूर (अत्यधिक दूरी से आशय)
चतुरङ्गबलम्	–	घुड़सवार, रथसवार हाथीसवार, पैदल सैनिक, इनको मिलाकर चार अङ्गों वाली सेना
व्यतिक्रम्य	–	वि + अति + क्रम् धातु + ल्यप् प्रत्यय बीतने पर
स्नुषाम्	–	पुत्रवधू को

अभ्यासः

1. संस्कृतभाषया उत्तरत ।

(क) विक्रमस्यौदार्यम् पाठः कस्मात् ग्रन्थात् सङ्कलितः?

(ख) उपार्जितानां वित्तानां रक्षणं कथं भवति?

(ग) धनविषये कीदृशः व्यवहारः कर्त्तव्यः?

(घ) जलमध्ये पुष्पाञ्जलिं दत्वा क्षणं कः स्थितः?

(ङ) समुद्रः राज्ञे किमर्थं रत्नचतुष्टयं दत्तवान्?

(च) द्वितीयरत्नेन किम् उत्पद्यते?

(छ) प्रीतिलक्षणं कतिविधं भवति?

2. रिक्तस्थानानि पूरयत ।

(क) उपार्जितानां वित्तानां .... हि रक्षणम्।

(ख) दातव्यं भोक्तव्यं धनविषये .... न कर्त्तव्यः।

(ग) ततः शिल्पिभिरतीव .... मण्डपः कारितः।

(घ) भो समुद्र! .... यज्ञं करोति।

(ङ) तस्मै राज्ञे व्ययार्थं .... दास्यामि।

(च) यद्रत्नं चतुरङ्गबलं .... तद् ग्रहीष्यामः।

(छ) सर्वेषां प्राणिनामनेनैव .... भवति।

3. अधोलिखितानां पदानां वाक्येषु प्रयोगं कुरुत ।

वित्तानाम्, शिल्पिभिः, गिरौ, एतेषाम्, दातव्यम् रोचते।

4. प्रकृतिप्रत्ययविभागः क्रियताम् ।

उपक्रान्तवान्, विधाय, गत्वा, गृहीत्वा, स्थितः, व्यतिक्रम्य, दातव्यम्।

5. सन्धिविच्छेदं कुरुत ।

तेनैव, यच्चोक्तम्, तस्येप्सितम्, चैव, यच्च, तदपि, सर्वापि, सोऽपि, प्राप्तैव, चेदस्मिन्, तच्छ्रुत्वा, त्वय्येवम्

6. सप्रसङ्गं हिन्दीभाषया व्याख्या कार्या ।

(क) उपार्जितानां वित्तानां त्याग एव हि रक्षणम्।
तटाकोदरसंस्थानां परीवाह इवाम्भसाम्।।

(ख) ददाति प्रतिगृह्णाति गुह्यमाख्याति पृच्छति।
भुङ्क्ते भोजयते चैव षड्विधं प्रीतिलक्षणम्।।

7. अधोलिखितानां समस्तपदानां विग्रहं कुरुत ।

विक्रमतुल्यम्, क्रियाविधिज्ञम्, सकलगुणनिवासः, यज्ञसामग्री, समुद्रतीरम्, जलमध्ये, पुष्पाञ्जलिम्, देदीप्यमानशरीरः, ययार्थम्, यज्ञसमाप्तिः, गुणकथनम्, ब्राह्मणसमूहः, प्राणधारणम्, राजसमीपम्।

योग्यताविस्तारः

अधोलिखितानां सूक्तीनामध्ययनं कृत्वा प्रस्तुतपाठेन भावसाम्यम् अवधत्त।

1. मित्रम्–

(*i*) मित्रं प्रीतिरसायनं नयनयोरानन्दनं चेतसः
पात्रं यत्सुखदुःखयोः सह भवेन्मित्रेण तद्दुर्लभम्।
ये चान्ये सुहृदः समृद्धिसमये द्रव्याभिलाषाकुला-
स्ते सर्वत्र मिलन्ति तत्त्वनिकषग्रावा तु तेषां विपत्।।

(*ii*) न मातरि न दारेषु न सोदर्ये न चात्मजे।
विश्वासस्तादृशः पुंसां यादृङ्-मित्रे स्वभावजे।। *कवितामृतकूप-88*

(*iii*) न तन्मित्रं यस्य कोपाद्बिभेति यद्वामित्रं शङ्कितेनोपचर्यम्।
यस्मिन्मित्रे पितरीवाश्वसीत तद्वै मित्रं सङ्गतानीतराणि।। *नीतिकल्पतरु-9.141*

(*iv*) केनामृतमिदं सृष्टं मित्रमित्यक्षरद्वयम्।
आपदां च परित्राणं शोकसन्तापभेषजम्।। *पञ्चतन्त्रम्-2.60*

2. औदार्यम्-

अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम्।
उदारचरितानां हि वसुधैव कुटुम्बकम्।। *पञ्चतन्त्रम्-5.305*

3. दानम्-

(*i*) धनानि जीवितं चैव परार्थे प्राज्ञ उत्सृजेत्।
सन्निमत्ते वरं त्यागो विनाशे नियते सति।।

(*ii*) परोपकाराय फलन्ति वृक्षाः परोपकाराय वहन्ति नद्यः।
परोपकाराय दुहन्ति गावः, परोपकारार्थमिदं शरीरम्।। *विक्रमोर्वशीयम्-66*

(*iii*) अष्टादशपुराणेषु व्यासस्य वचनद्वयम्।
परोपकारः पुण्याय पापाय परपीडनम्।।

(*iv*) श्रोत्रं श्रुतेनैव न कुण्डलेन, दानेन पाणिर्नतु कङ्कणेन।
विभाति कायः करुणापराणां परोपकारेण न चन्दनेन।। *नीतिशतकम्-1.72*

(*v*) पद्माकरं दिनकरो विकचीकरोति
चन्द्रो विकासयति कैरवचक्रवालम्।
नाभ्यर्थितो जलधरोऽपि जलं ददाति
सन्तः स्वयं परहितेषु कृताभियोगाः।।

नीतिशतकम्-1.74



अष्टमः पाठः

भू-विभागाः

प्रस्तुत पाठ मुगलसम्राट् शाहजहाँ के विद्वान पुत्र दाराशिकोह द्वारा विरचित ग्रन्थ 'समुद्रसङ्गमः' से संकलित किया गया है। दाराशिकोह संस्कृत तथा अरबी भाषा के तत्कालीन विद्वानों में अग्रगण्य थे। 'समुद्रसङ्गमः' ग्रन्थ में 'पृथिवी निरूपण' के अन्तर्गत उन्होंने पर्वतों, द्वीपों, समुद्रों आदि का विशिष्ट शैली में वर्णन किया है। उसी वर्णन के अंश यहाँ "भू-विभागाः" शीर्षक के अन्तर्गत प्रस्तुत किये गये हैं।

दाराशिकोह मुगलसम्राट् शाहजहाँ के सबसे बड़े पुत्र थे। उनका जीवनकाल 1615 ई॰ से 1659 ई॰ तक है। शाहजहाँ उनको राजपद देना चाहते थे पर उत्तराधिकार के संघर्ष में उनके भाई औरंगजेब ने निर्ममता से उनकी हत्या कर दी। दाराशिकोह ने अपने समय के श्रेष्ठ संस्कृत पण्डितों, ज्ञानियों और सूफी सन्तों की सत्संगति में वेदान्त और इस्लाम के दर्शन का गहन अध्ययन किया और उन्होंने फारसी और संस्कृत में इन दोनों दर्शनों की समान विचारधारा को लेकर विपुल साहित्य लिखा। फारसी में उनके ग्रन्थ हैं-सारीनतुल् औलिया, सकीनतुल् औलिया, हसनातुल् आरफीन (सूफी सन्तों की जीवनियाँ), तरीकतुल् हकीकत, रिसाल – ए-हकनुमा, आलमे नासूत, आलमे मलकूत (सूफी दर्शन के प्रतिपादक ग्रन्थ), सिर्र-ए-अकबर (उपनिषदों का अनुवाद) उनके फारसी ग्रन्थ हैं। श्रीमद्भगवद्गीता और योगवासिष्ठ के भी फारसी भाषा में उन्होंने अनुवाद किये। 'मज्म-उल्-बहरैन्' फारसी में उनकी अमर कृति है, जिसमें उन्होंने इस्लाम और वेदान्त की अवधारणाओं में मूलभूत समानताएँ बतलायी हैं। इसी ग्रन्थ को दाराशिकोह ने 'समुद्रसङ्गमः' नाम से संस्कृत में लिखा।

अथ पृथिवीनिरूपणम्-पृथिव्याः सप्तभेदाः। ते च भेदाः सप्तपुटान्युच्यन्ते। तानि च पुटानि-अतल-वितल-सुतल-तलातल-रसातल-पातालाख्यानि। अस्मन्मतेऽपि सप्तभेदाः। यथाऽस्मद्वेदे श्रूयते परमेश्वरो यथा सप्तगगनानि तद्वत् पृथिव्याः सप्तविभागान् कृतवान्।

अथ पृथिव्याः विभागनिरूपणं यत्र लोकास्तिष्ठन्ति। तस्याः दार्शनिकैः सप्तधा विभागः कृतस्तान् विभागान् सप्त अअक्लिम इति वदन्ति। पौराणिकास्तु सप्त द्वीपानि

वदन्ति। एतान् खण्डान् पलाण्डुत्वग्वदुपर्यधो भावेन न ज्ञायन्ते, 'किन्तु' निःश्रेणी सोपानवज्जानन्ति। सप्त पर्वतान् सप्त कुलाचलान् वदन्ति, तेषां पर्वतानां नामान्येतानि प्रथमः सुमेरुर्मध्ये, द्वितीयो हिमवान्, तृतीयो हेमकूटः, चतुर्थो निषधः एते सुमेरोरुत्तरतः। माल्यवान् पूर्वस्यां, गन्धमादनः पश्चिमायां कैलासश्च मर्यादापर्वतेभ्योऽतिरिक्तः। यथाऽस्मद्वेदे श्रूयते- "अस्माभिः पर्वताः शंकवः कृताः। एतेषां सप्तद्वीपानां प्रत्येकमावेष्टनरूपाः सप्तसमुद्राः। लवणो जम्बुद्वीपस्यावरकः। इक्षुरसः प्लक्षद्वीपस्य, दधिसमुद्रः क्रौञ्चद्वीपस्य, क्षीरसमुद्रः शाकद्वीपस्य, स्वादुजलसमुद्रः पुष्करद्वीपस्यावरकः इति। सप्त समुद्राः अस्मद्वेदेऽपि प्रकटाः भवन्ति। वृक्षाः लेखनी भवेयुः समुद्रोऽपि मसी भवेत्, परं भगवद्वाक्यानि समाप्तानि न भवन्ति। प्रतिद्वीपं प्रतिपर्वतं प्रतिसमुद्रं नानाजातयोऽनन्ता जन्तवस्तिष्ठन्ति। या पृथिवी ये पर्वताः ये समुद्रा सर्वाभ्यः पृथिवीभ्यः सर्वेभ्यः पर्वतेभ्यः सर्वेभ्यः समुद्रेभ्यः उपरि तिष्ठन्ति तान् 'स्वर्ग' इति वदन्ति। या पृथिवी ये पर्वताः ये समुद्राः सर्वाभ्यः पृथिवीभ्यः सर्वेभ्यः पर्वतेभ्यः सर्वेभ्यः समुद्रेभ्योऽधो भागे तिष्ठन्ति स 'नरक' इति वदन्ति। निश्चितं किल सिद्धैः स्वर्गनरकादिकं सर्वं ब्रह्माण्डान्न किञ्चिद्बहिरस्तीति। ते सप्तगगनाश्रिताः सप्त ग्रहाः स्वर्गं परितो मेखलावत् परिभ्रमन्तीति वदन्ति; न स्वर्गस्योपरि। अथ स्वर्गस्य यदि मन आकाशं जानन्ति अस्मदीयास्तमर्श इति वदन्ति। स्वर्गभूमिं कुर्शीति वदन्ति।"

शब्दार्थाः टिप्पणयश्च

पुटानि	–	भेदाः, भेद या पुट
अअक्लिम	–	अकूलीन (खण्ड अथवा टुकड़ा)
पलाण्डुत्वक्	–	प्याज का छिलका
कुलाचलाः	–	कुलपर्वत अथवा सात पर्वतों की माला
निःश्रेणी	–	निसेनी अथवा सीढ़ी
सोपान	–	निसेनी में एक समान दूरी पर लगने वाले छोटे-छोटे काष्ठ-खण्ड
शङ्कवः	–	कीलें

आवेष्टनरूपा	–	आवरण करने वाले
इक्षुरसः	–	गन्ने का रस, सुरा अथव मदिरा
आवरकः	–	ढकने वाला
मसी	–	स्याही
मेखलावत्	–	मेखला अथवा शृङ्खला के समान
'अर्श'	–	आकाश अथवा गगन, स्वर्ग के ऊपर की छत (फारसी शब्द)
'कुर्शी'	–	परमेश्वर का सिंहासन अथवा स्वर्गभूमि, 'कुर्शी' को आठवाँ आसमान भी कहा गया है। (फारसी शब्द)

अभ्यासः

1. **संस्कृतेन उत्तरं दीयताम् ।**

(क) पृथिव्याः कति भेदाः?

(ख) पृथिव्याः सप्तपुटानां नामानि कानि सन्ति?

(ग) पर्वताः कति सन्ति?

(घ) समुद्राः कति सन्ति?

(ङ) दधिसमुद्रः कस्य द्वीपस्यावरकः?

(च) 'अर्श' इति पदं कस्मै प्रयुक्तम्?

(छ) 'कुर्शी' इति पदं कस्मिन्नर्थे प्रयुक्तम्?

(ज) 'अस्मद्वेद' इति शब्दः दाराशिकोहेन कस्य ग्रन्थस्य कृते प्रयुक्तः?

2. **हिन्दीभाषया आशयं लिखत ।**

एतान् खण्डान् पलाण्डुत्वग्वदुपर्यधोभावेन न ज्ञायन्ते, किन्तु निःश्रेणी–सोपानवज्जानन्ति। सप्तपर्वतान् सप्तकुलाचलान् वदन्ति, तेषां पर्वतानां नामान्येतानि–प्रथमः सुमेरुर्मध्ये, द्वितीयो हिमवान्, तृतीयो हेमकूटः, चतुर्थो निषधः एते सुमेरोरुत्तरतः।

3. **अधोलिखितानां पदानां स्वसंस्कृतवाक्येषु प्रयोगं कुरुत ।**

पुटानि, कृतवान्, आवेष्टनरूपा, सर्वेभ्यः, ब्रह्माण्डात्, परिभ्रमन्ति।

4. अधोलिखितानां पदानां सन्धिविच्छेदं कुरुत ।

पुटान्युच्यन्ते, अस्मन्मते, पलाण्डुत्वग्वदुपर्यधोभावेन, सोपानवज्जानन्ति, सुमेरोरुत्तरतः, समुद्रोऽपि, किञ्चिद्बहिरस्तीति, अस्मदीयास्तमर्श

5. अधोलिखितानां पदानां पर्यायवाचिपदानि लिखत ।

पृथिवी, पर्वतः, समुद्रः, गगनम्, स्वर्गः

6. रिक्तस्थानानाम् पूर्तिः विधेया ।

(क) पौराणिकास्तु .... द्वीपानि वदन्ति

(ख) सप्त .... सप्तकुलाचलान् वदन्ति

(ग) .... जम्बुद्वीपस्यावरकः

(घ) स्वर्गभूमिं .... वदन्ति

योग्यताविस्तारः

(क) संस्कृतवाङ्मये भूगोल-खगोलविषयकं ज्ञानं प्राचुर्येण उपलभ्यते ।

यथा-सूर्यसिद्धान्तादिशास्त्रेषु-

भगवन्! किम्प्रमाणा भूः किमाकारा किमाश्रया।
किंविभागा कथं चात्र सप्तपातालभूमयः॥

अहोरात्रव्यवस्थां च विदधाति कथं रविः।
कथं पर्येति वसुधां भुवनानि विभावयन्॥

कथं पर्येति वसुधां भुवनानि विभावयन्।
भूमेरुपर्युपर्यूर्ध्वाः किमुत्सेधाः किमन्तराः॥

(ख) 'कुलाचलाः' सप्तपर्वतानां माला अस्ति। संस्कृतवाङ्मये एते सप्त पर्वताः ।

महेन्द्रो मलयः सह्यः शुक्तिमान् ऋक्षपर्वतः।
विन्ध्यश्च पारियात्रश्च सप्तैते कुलपर्वताः॥

(ग) अस्मिन् पाठे वर्णितानां भौगोलिकतथ्यानां तुलना आधुनिकभूगोल-विज्ञानेन प्रमाणिततथ्यैः सह करणीया ।

(घ) सप्तधा इति पदं अनुसृत्य अधोलिखितैः संख्यावाचिभिः शब्दैः पदानि निर्मातव्यानि एकम्, द्वि, त्रि, चतुर्, पञ्च, ...



नवमः पाठः

कार्यं वा साधयेयम्, देहं वा पातयेयम्

प्रस्तुत पाठ अम्बिकादत्तव्यास द्वारा रचित 'शिवराजविजय' नामक ऐतिहासिक उपन्यास के प्रथम विराम के चतुर्थ निःश्वास से संकलित है। इसके रचयिता अम्बिकादत्तव्यास बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। इन्होंने संस्कृत व हिन्दी में शताधिक ग्रन्थों की रचना की। इनकी कृतियों में अभिव्यक्त अद्भुत कल्पनाशक्ति एवं पात्रों के चरित्र में प्रदर्शित उच्च आदर्शों ने विद्वज्जनों को अपनी ओर आकृष्ट किया।

प्रस्तुत पाठ में यह दर्शाया गया है कि जो वीर, विश्वासपात्र, कर्मठ व दृढसंकल्प वाले होते हैं, उन्हें मानवीय एवं प्राकृतिक किसी भी प्रकार की बाधाएँ अपने संकल्पित लक्ष्य को प्राप्त करने से नहीं रोक सकतीं, संकल्पित कार्य को पूरा करने में चाहे उनके प्राण भी क्यों न चले जाएँ।

शिवाजी का विश्वासपात्र एवं कर्मठ दूत (गुप्तचर) अपने निर्दिष्ट कार्यों को पूरा करने के लिए सिंहदुर्ग से पत्र लेकर तोरणदुर्ग जाता है। रास्ते में अनेक प्रकार की भीषण प्राकृतिक बाधाओं के बाद भी वह तनिक भी विचलित नहीं होता है तथा अपने संकल्पित लक्ष्य की ओर बढ़ता ही जाता है। वह कहता है–'**कार्यं वा साधयेयम्, देहं वा पातयेयम्**'–अर्थात्–'कार्य सिद्ध करूँगा या देह त्याग कर दूँगा'। यही भाव प्रस्तुत गद्यांश में वर्णित है।

मासोऽयमाषाढः, अस्ति च सायं समयः, अस्तं जिगमिषुर्भगवान् भास्करः सिन्दूर-द्रव-स्नातानामिव वरुण-दिगवलम्बिनामरुण-वारिवाहानामभ्यन्तरं प्रविष्टः। कलविङ्काश्चाटकैर- रुतैः परिपूर्णेषु नीडेषु प्रतिनिवर्तन्ते। वनानि प्रतिक्षणमधिकाधिकां श्यामतां कलयन्ति। अथाकस्मात् परितो मेघमाला पर्वतश्रेणीव प्रादुरभूत्, क्षणं सूक्ष्मविस्तारा, परतः प्रकटित-शिखरि शिखर-विडम्बना, अथ दर्शित-दीर्घ-शुण्डमण्डित-दिगन्त-दन्तावल-भयानकाकारा ततः पारस्परिक-संश्लेष-विहित-महान्धकारा च समस्तं गगनतलं पर्यच्छदीत्।

अस्मिन् समये एकः षोडशवर्ष-देशीयो गौरो युवा हयेन पर्वतश्रेणीरुपर्युपरि गच्छति स्म। एष सुघटितदृढशरीरः श्याम-श्यामैर्गुच्छ-गुच्छैः कुञ्चित-कुञ्चितैः कच-कलापैः

कमनीय-कपोलपालिः दूरागमनायासवशेन सूक्ष्म-मौक्तिक-पटलेनेव स्वेदबिन्दु-व्रजेन समाच्छादित-ललाट-कपोल-नासाग्रोत्तरोष्ठः प्रसन्न-वदनाम्भोज- प्रदर्शित-दृढसिद्धान्त-महोत्साहः, राजतसूत्र-शिल्पकृत-बहुल-चाकचक्य-वक्र- हरितोष्णीष-शोभितः, हरितेनैव च कञ्चुकेन-व्यूढगूढचरता-कार्यः, कोऽपि शिववीरस्य विश्वासपात्रं सिंहदुर्गात् तस्यैव पत्रमादाय तोरणदुर्गं प्रयाति।



तावदकस्मादुत्थितो महान् झञ्झावातः, एकः सायंसमयप्रयुक्तः स्वभाव-वृत्तोऽन्धकारः, स च द्विगुणितो मेघमालाभिः। झञ्झावातोद्धूतैः रेणुभिः शीर्णपत्रैः कुसुमपरागैः शुष्कपुष्पैश्च पुनरेष द्वैगुण्यं प्राप्तः। इह पर्वत-श्रेणीतः पर्वतश्रेणीः, वनाद् वनानि, शिखराच्छिखराणि प्रपातात् प्रपातान्, अधित्यकातोऽधित्यकाः, उपत्यकात उपत्यकाः, न कोऽपि सरलो मार्गः, नानुद्भेदिनी भूमिः, पन्थाः अपि च नावलोक्यते। क्षणे-क्षणे हयस्य खुराश्चिक्कण-पाषाण-खण्डेषु प्रस्खलन्ति। पदे पदे दोधूयमानाः

वृक्षशाखाः सम्मुखमाघ्नन्ति, परं दृढसङ्कल्पोऽयं सादी (अश्वारोही) न स्वकार्याद् विरमति। परितः स-हडहडाशब्दं दोधूयमानानां परस्सहस्त्र-वृक्षाणां, वाताघात-सञ्जात-पाषाण-पातानां प्रपातानाम्, महान्धतमसेन ग्रस्यमानानामिव सत्त्वानां क्रन्दनस्य च भयानकेन स्वनेन कवलीकृतमिव गगनतलम्। परं "देहं वा पातयेयं कार्यं वा साधयेयम्" इति कृतप्रतिज्ञोऽसौ शिववीरचरो निजकार्यान्न विरमति।

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

जिगमिषुः	–	जाने के इच्छुक; गम् + सन् + उ; इच्छार्थक 'सन्' प्रत्यय।
सिन्दूरद्रवस्नातानाम्	–	सिन्दूर के घोल से स्नान किये हुए।
स्नातानाम्	–	ष्णा (शौचे) + क्त प्रत्यय। षष्ठी विभक्ति बहुवचन।
वरुणदिक्	–	पश्चिमदिशा; वरुणस्य दिक्; वरुणदेव को पश्चिम दिशा का अधिपति माना जाता है।
वरुणदिगवलम्बिनाम्	–	वरुणदिशः अवलम्बनं शीलं येषां ते। तेषाम्। अव + लम्ब् + इन् प्रत्यय।
अरुणवारिवाहानाम्	–	लालिमायुक्त बादलों के; अरुणाश्च ते वारिवाहाश्च। तेषाम्। वारि वहन्ति इति वारिवाहाः = मेघाः
कलविङ्काः	–	पक्षी (गौरैया)
चाटकैरः	–	पक्षिशावकों के द्वारा। चटकस्य अपत्यं चाटकैरः। चटका + एरच् प्रत्यय। गौरैया का बच्चा
प्रतिक्षणम्	–	पल-पल। क्षणं क्षणम् = प्रतिक्षणम्। अव्यय।
नीडेषु	–	घोंसलों में। नपुंसकलिङ्ग, सप्तमी बहुवचन।
श्यामताम्	–	कालेपन को। श्यामस्य भावः = श्यामता। भावार्थ में 'तल्' प्रत्यय। श्याम + तल्
कलयन्ति	–	प्राप्त करते हैं। कल (गतौ सङ्ख्याने च) + णिच्, लट् लकार प्रथम पुरुष, बहुवचन। चुरादिगण
अथ	–	अनन्तरम्। अव्यय।

दर्शितदीर्घशुण्डमण्डित दिगन्तदन्तावलभयानकाकारा – लम्बी-लम्बी सूँडों से सुशोभित दिग्गजों के समान भयानक आकार वाली (मेघमाला)

दीर्घश्चासौ शुण्डश्च = दीर्घशुण्डः। दर्शितश्चासौ दीर्घशुण्डश्च। दर्शितदीर्घशुण्डः। दर्शितदीर्घशुण्डेन मण्डितः। दिशाम् अन्ताः दिगन्ताः। शोभनौ दन्तौ अस्य इति दन्तावलः। दिगन्ता एव दन्तावलाः दिगन्तदन्तावलाः। दीर्घशुण्डमण्डिताश्च ते दिगन्तदन्तावलाश्च। दर्शितदीर्घशुण्डमण्डितदिगन्तदन्तावलाः। भयनाकश्च असौ आकारश्च भयानकाकारः। दर्शितदीर्घशुण्डमण्डितदिगन्त-दन्तावला इव भयानकाकारः यस्या सा (मेघमाला)

प्रकटितशिखरिशिखरविडम्बना – पर्वत शिखरों का अनुकरण करने वाली (मेघमाला) शिखरिणां शिखराणि शिखरिशिखराणि। शिखरिशिखराणां विडम्बनं = शिखरिशिखरविडम्बनम्। प्रकटितं-शिखरिशिखरविडम्बनं यया सा (मेघमाला)

मेघमाला समस्तं गगनतलं परितः पर्यच्छदीत् – मेघमाला ने समस्त गगन मण्डल को आच्छादित कर लिया। 'परितः' अव्यय के प्रयोग से 'गगनतलं' और 'समस्तं' पदों में द्वितीया विभक्ति हुई है – 'अभितः परितःसमयानिकषाहाप्रतियोगेऽपि' इस अनुशासन से।

परितः – चारों ओर

प्रादुरभूत् – प्रकट हुई। प्रादुस् + भू + लुङ् लकार, प्रथम पुरुष एकवचन

पारस्परिकसंश्लेषेण – (बादलों के)परस्पर मिल जाने से

पर्यच्छदीत् – ढक लिया है। (व्याप्त हो गई)। परि + अच्छदीत्। छद (संवरणे) लुङ् लकार, प्रथम पुरुष एकवचन

षोडशवर्षदेशीयः – लगभग सोलह वर्ष का। 'लगभग' इस अर्थ में 'कल्प' 'देश्य' या 'देशीयर्' प्रत्यय लगते हैं। यहाँ 'देशीयर्' प्रत्यय लगा है। षोडशवर्ष + देशीयर्

कुञ्चितकुञ्चितैः – घुँघराले। कुञ्च् (गति-कौटिल्यालपीभावेषु) + क्त प्रत्यय।

कचकलापैः – केश समूहों के द्वारा। कचानां कलापाः तैः

कमनीयकपोलपालिः	–	सुन्दर गालों वाला। कमनीये कपोलपाली यस्य सः कम् (कान्तौ) + अनीयर् प्रत्यय।
हयेन	–	घोड़े से
स्वेदबिन्दुव्रजेन	–	पसीने की बूँदों से। स्वेदबिन्दूनां व्रजः तेन
समाच्छादितललाट–कपोलनासाग्रोत्तरोष्ठः	–	जिसका ललाट, कपोल, नासिका का अग्रभाग तथा ऊपरी ओंठ (पसीने की बूँदों से) व्याप्त है। ललाटश्च कपोलश्च नासाग्रश्च उत्तरोष्ठश्च = ललाटकपोल–नासाग्रोत्तरोष्ठम् (समास में एकवचन होना विशेष है) समाच्छादितं ललाटकपोलनासाग्रोत्तरोष्ठं यस्य सः बहुव्रीहि समास।
प्रसन्नवदनाम्भोजेन	–	प्रसन्नमुखकमल से
प्रसन्नवदनाम्भोजप्रदर्शित–दृढसिद्धान्तमहोत्साहः	–	प्रसन्न मुख कमल से दृढ सिद्धान्त के महोत्साह को प्रकट करने वाला
राजतसूत्रशिल्पकृतबहुल–चाकचक्यवक्रहरितोष्णीषशोभितः	–	चाँदी के तार की कढाई (शिल्प) के कारण अत्यधिक चमकने वाली तथा टेढ़ी बँधी हुई हरी पगड़ी से सुशोभित। राजतसूत्रस्य शिल्पेन कृतं बहुलं चाकचक्यं यस्य तथाभूतं वक्रं हरितं च यत् उष्णीषं, तेन शोभितः बहुव्रीहि समास।
आदाय	–	लेकर। आ + दा + ल्यप् प्रत्यय
प्रयाति	–	जाता है। प्र + या (प्रापणे) + लट् लकार, प्रथम पुरुष एकवचन
झञ्झावातोद्धूतैः	–	आँधी से उठी। झञ्झावातेन उद्धूतैः। उत् + धू (कम्पने) क्त प्रत्यय
रेणुभिः	–	धूलों से
द्वैगुण्यम्	–	दुगुना हो गया। द्विगुणस्य भावः। द्विगुण + ष्यञ्
अनुद्भेदिनी	–	समतल। न + उद्भेदिनी। न + उद् + भिद् + इन् + ङीप् प्रत्यय
प्रपातात् प्रपाता	–	झरने के बाद झरने

अधित्यकातोऽधित्यकाः	–	अधित्यका (पर्वत के ऊपर की ऊँची भूमि) के बाद अधित्यकाएँ
उपत्यकात उपत्यकाः	–	पर्वत के पास की नीची भूमि। उपत्यका के बाद उपत्यकाएँ
दोधूयमानाः	–	अत्यधिक हिलने वाले। पुनः पुनः अत्यधिकं कम्पमानाः। धूञ् + यङ् + शानच् प्रत्यय
आघातः	–	अभिघात। चोट। आ + हन् + क्त प्रत्यय
महान्धतमसेन	–	अत्यन्त अन्धकार से। अकारान्त नपुंसक शब्द है। अन्धयति इति अन्धम्। अन्धं च तत् तमश्च। अन्धतमसम्। महच्च तत् अन्धतमसं च महान्धतमसम्। तेन
कवलीकृतम्	–	ग्रसित होता हुआ। अकवलं कवलं सम्पद्यमानं कृतं कवलीकृतम्। कवल + च्वि + कृतम् प्रत्यय
आघ्नन्ति	–	आ + हन्। लट् लकार, प्रथम पुरुष, बहुवचन
सादी	–	घुड़सवार
चिक्कणपाषाणखण्डेषु	–	चिकने पत्थर खण्डों पर
साधयेयम्	–	सिद्ध करूँगा। साध् (संसिद्धौ) + णिच् प्रत्यय + लिङ् लकार। उत्तम पुरुष एकवचन
पातयेयम्	–	नष्ट कर दूँगा। पत् (गतौ) + णिच् प्रत्यय। लिङ् लकार उत्तम पुरुष एकवचन

अभ्यासः

1. संस्कृतेन उत्तरं दीयताम् ।

(क) सायं समये भगवान् भास्करः कुत्र जिगमिषुः भवति?

(ख) अस्ताचलगमनकाले भास्करस्य वर्णः कीदृशः भवति?

(ग) नीडेषु के प्रतिनिवर्तन्ते?

(घ) शिववीरस्य विश्वासपात्रं किं स्थानं प्रयाति स्म?

(ङ) प्रतिक्षणमधिकाधिकां श्यामतां कानि कलयन्ति?

(च) शिववीरविश्वासपात्रस्य उष्णीषं कीदृशमासीत्?

(छ) मेघमाला कथं शोभते?

2. समीचीनोत्तरसङ्ख्यां कोष्ठके लिखत ।

अ. शिवराजविजयस्य रचयिता कः अस्ति? ( )

(क) बाणभ‍ट्टः

(ख) श्रीहर्षः

(ग) अम्बिकादत्तव्यासः

(घ) माघः

आ. कतिवर्षदेशीयो युवा हयेन पर्वतश्रेणीरुपर्युपरि गच्छति स्म । ( )

(क) चतुर्दशवर्षदेशीयः

(ख) द्वादशवर्षदेशीयः

(ग) पञ्चदशवर्षदेशीयः

(घ) षोडशवर्षदेशीयः

इ. शिववीरस्य विश्वासपात्रं किम् आदाय तोरणदुर्गं प्रयाति ?( )

(क) संवादम् आदाय

(ख) पत्रम् आदाय

(ग) पुष्पगुच्छम् आदाय

(घ) अश्वम् आदाय

3. रिक्तस्थानानि पूरयत ।

(क) अथाकस्मात् परितो मेघमाला .... प्रादुरभूत्।

(ख) क्षणे क्षणे .... खुराश्चिक्कणपाषाणखण्डेषु प्रस्खलन्ति।

(ग) पदे पदे .... वृक्षशाखाः सम्मुखमाघ्नन्ति।

(घ) कृतप्रतिज्ञोऽसौ .... निजकार्यान्न विरमति।

4. अधोलिखितानां पदानाम् अर्थान् विलिख्य वाक्येषु प्रयुञ्जत ।

भास्करः, मेघमाला, वनानि, मार्गः, वीरः, गगनतलम्, झञ्झावातः, मासः, सायम्।

5. अधोलिखितानां पदानां सन्धिविच्छेदं कृत्वा सन्धिनिर्देशं कुरुत ।

तस्यैव, शिखराच्छिखराणि, कोऽपि, प्रादुरभूत्, अथाकस्मात्, कार्यान्न।

6. अधोलिखितानां पदानां प्रकृतिप्रत्ययविभागं प्रदर्शयत ।

प्रयुक्तः, उत्थितः, उत्प्लुत्य, रुतैः, उपत्यकातः, उत्थितः, ग्रस्यमानः।

7. अलङ्कारनिर्देशं कुरुत ।

(1) वदनाम्भोजेन (2) दिगन्तदन्तावलः (3) सिन्दूरद्रवस्नातानामिव वरुणदिगवलम्बिनाम्

8. विग्रहवाक्यं विलिख्य समासनामानि निर्दिशत ।

मेघमाला, महान्धकारः, पर्वतश्रेणीः, महोत्साहः, विश्वासपात्रम्, हरितोष्णीषशोभितः।

9. पाठ्यांशस्य सारं हिन्दीभाषया आङ्ग्लभाषया वा लिखत ।

10. पाठ्यांशे प्रयुक्तानि अव्ययानि चित्वा लिखत ।

योग्यताविस्तारः

शिवाजी इत्यस्य कथामाधारीकृत्य संस्कृते, अन्यासु भारतीय-भाषासु च लिखितानां कथानकानां ग्रन्थानां वा सूचना सङ्गृहीतव्या। तद्यथा संस्कृते 'श्रीशिवराज्योदयं' नाम महाकाव्यम् अस्ति।

द्वादशमासानां नामानि ज्ञेयानि, अस्मिन् पाठे कस्य मासस्य वर्णनं कृतम्, तेन कथाप्रसङ्गे कः विशेषः समुत्पन्न इति निरूपणीयम्।

अस्मिन् पाठे निसर्गस्य (प्रकृतेः) कीदृशं स्वरूपं चित्रितम्, तस्माच्च घटनाचक्रं कथं परिवर्तते इति प्रतिपादनीयम्।





12078CH10

दशमः पाठः

दीनबन्धुः श्रीनायारः

प्रस्तुत पाठ उड़िया भाषा के प्रख्यात साहित्यकार श्री चन्द्रशेखरदासवर्मा द्वारा विरचित 'पाषाणीकन्या' कथासंग्रह के संस्कृत अनुवाद से संकलित है।

इसके अनुवादक डॉ॰ नारायण दाश हैं। इस कथा के नायक श्रीनायार का पालन-पोषण एक अनाथाश्रम में हुआ है। श्रीनायार ने अपनी कर्मदक्षता, दाक्षिण्य और सेवामनोवृत्ति से समाज में आदर्श स्थापित किया है। वह प्रतिमास अपने वेतन का आधा से अधिक भाग केरल में स्थापित अनाथाश्रम को भेजते हैं। प्रस्तुत कथा में श्रीनायार का लोककल्याणकारी आदर्श चरित्र वर्णित है।

श्रीनायारः केन्द्रसर्वकारतः स्थानान्तरणेन आगत्य ओडिशासर्वकारस्य अधीने प्रायः वर्षत्रयेभ्यः कार्यं करोति। तथाप्यस्मिन् वर्षत्रयात्मके कालखण्डे एकवारमपि स्वराज्यं केरलं प्रति गमनाय इच्छां न प्रकटितवान् । स स्वल्पभाषी, अतस्तस्य मनःकथा मनोव्यथा वा बोधगम्या नास्ति। सन्तुलितो वार्त्तालापः, साक्षात्समये आगमनम्, ततः सञ्चिकासु मनोनिवेशः, कार्यं समाप्य स्वगृहं प्रत्यागमनञ्च तस्य वैशिष्ट्यमासीत्। तस्य कर्मनैपुण्यं दृष्ट्वा एव ओडिशासर्वकारस्तं स्थानान्तरणेन स्वीकृत्य खाद्यापूर्तिविभागे सचिवपदे नियुक्तवान् । गतस्य वर्षत्रयस्य आकलनात् ज्ञायते यद् विभागस्य कार्यनैपुण्यं दशगुणैः वर्धितम्। खाद्ये अपमिश्रणं न्यूनीभूतम्। अत उपभोक्तृणामपि अभियोगो नास्ति विभागस्य विपक्षे। मन्त्रिणां मध्येऽपि तस्य सुख्यातिः वर्तते।

श्रीनायारस्य दायित्वग्रहणस्य एकमासाभ्यन्तरे बहुदिनेभ्यः स्थगितानां विविध समस्यानामपि समाधानं जातम्। स्वकार्यं त्यक्त्वा अपरस्य सहकारस्तस्य परमधर्मः। सः प्रतिमासं प्रथमदिवसे स्ववेतनस्य अर्धाधिकं भागं केरलं प्रेषयति स्म कश्चित् सम्पर्कः। तेनानुमीयते तस्य राज्येन सह अस्ति कश्चित् सम्पर्कः। कानिचन मलयालमभाषायाः संवादपत्राणि अतिरिच्य कदापि तस्य नाम्ना किमपि पत्रमागतमिति कोऽपि कदापि न जानाति।



एकस्मिन् दिने श्रीनायारः पत्रमेकं धृत्वा मस्तकमवनमय्य पठन् आसीत्। नेत्रतीराद् विगलिता अश्रुधारा आर्द्रीकरोति स्म पत्रस्य अर्धाधिकं भागम् । तदानीमेव तस्य कार्यालयलिपिकः श्रीदासःप्रविशति। श्रीनायारः तमुक्तवान्–अधुना मम गमनसमयः समुपागत एव। मम दायित्वहस्तान्तरणपत्रकं सज्जीकुरु। अहमधुना द्वित्राणां दिवसानां सकारणावकाशं स्वीकरिष्यामि। पुनः तदनु स्वीकरिष्यामि दीर्घावकाशम् । यदि कस्मैचिद् अज्ञातेन मया रूक्षो व्यवहारः प्रदर्शितः स्यात्, तदर्थं ते मह्यमुदारचित्तेन क्षमां प्रदास्यन्ति इति सर्वेभ्यो निवेदयतु। अनन्तरं सर्वे अश्रुलहृदयैः सौप्रस्थानिकीं ज्ञापितवन्तः।

तस्य गमनस्य दिवसत्रयात्परं कार्यालये पत्रमेकमागतम्। कौतूहलवशात् श्रीदासः तत्पत्रमुद्घाटितवान् । लेखिका आसीत् सुश्री मेरी यस्याः पार्श्वे सः प्रतिमासमर्धाधिकं धनं धनादेशेन प्रेषयति स्म। पत्रे एवं लिखितमासीत्.....

श्रीनायार!

भगवान् यीशुस्तव मंङ्गलं वितनोतु । मम पूर्वतनं पत्रं त्वया प्राप्तं स्यात्। तव समीपे इदं मम शेषपत्रम्। यतो हि मम जीवनप्रदीपो निर्वापितो भवितुमिच्छति। प्रायस्तवागमनसमये अहं न स्थास्यामि। पूर्वपत्रे-अहमाश्रमस्य सर्वविधमायव्ययाकलनं प्रेषितवती। केवलं यीशोः समीपे गमनात्पूर्वं तव दर्शनमिच्छामि। प्रथमं त्वया निर्मितोऽनाथाश्रमोऽधुना महाद्रुमेण परिणतः। अधुनात्र शताधिका अनाथशिशवो लालिताः पालिताश्च भवन्ति । तव हस्तयोस्तव अनाथाश्रमं समर्प्य अहं सौप्रस्थानिकीमिच्छामि। अद्य समाजस्त्वत्तो बहु किमपि इच्छति। यौ कौ वां तव पितरौ भवतां नाम, तौ धन्यवादार्हौ। कदाचित्ताभ्यां त्वं विस्मृतः स्यात् त्वमवश्यमेतान् शिशून् संपोष्य उत्तममनुष्यान् कारयिष्यसीति मम कामना वर्तते। प्रभुः त्वत्त इमामेवाशां पोषयति। यो जन्म दत्तवान्, स जीवितुमधिकारमपि दत्तवान्। भगवान् त्वां दीर्घजीवनं कारयतु ।इति।।

तव शुभाकांक्षिणी

सुश्रीः मेरी

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

तथाप्यस्मिन्	–	तथापि + अस्मिन्, तब भी इसमें।
बोधगम्या	–	बोधेन गम्या, बोध (ज्ञान) के द्वारा गम्य, जानने योग्य।
मनोनिवेशः	–	मनसः निवेशः, ष. तत्पुरुष समास, दत्तचित्त होना।
प्रत्यागमनम्	–	प्रति + आङ् + गम् + ल्युट्, वापिस लौटना।
कर्मनैपुण्यम्	–	कर्मसु नैपुण्यम्, सप्तमी तत्पुरुष, कर्मों में निपुणता
स्वीकृत्य	–	स्वी + कृ + ल्यप्, स्वीकार करके,
अपमिश्रणम्	–	मिलावट
अनुमीयते	–	अनु + मा + लट् प्रथम पुरुष एकवचन, अनुमान किया जाता है।
न्यूनीभूतम्	–	न्यूनी + भू + क्त, कम हो गया।

अतिरिच्य	–	अतिरिक्त
विगलिता	–	वि + गल् + क्त + टाप्, निकली हुई।
अवनमय्य	–	अव + नम् + ल्यप्, झुकाकर
दायित्वहस्तान्तरणम्	–	दूसरे को प्रभार हस्तगत कराना
सज्जीकुरु	–	सज्ज् + च्वि + कृ + लोट् मध्यम पुरुष एकवचन, तैयार करो।
धनादेशेन	–	धनाय आदेशः, तेन चतुर्थी तत्पुरुष, मनीआर्डर से।
निर्वापितः	–	निर् + वापि (णिच्) + क्तः, शान्त
आयव्ययाकलनम्	–	आय व्यय का विवरण
सौप्रस्थानिकी	–	विदाई
पितरौ	–	माता च पिता च (द्वंद्व समास) माता और पिता।

अभ्यासः

1. **संस्कृतभाषया उत्तराणि लिखत ।**
   (क) श्रीनायारः कुत्र गमनाय इच्छां न प्रकटितवान्?
   (ख) विभागस्य विपक्षे केषाम् अभियोगो नास्ति?
   (ग) श्रीनायारः स्ववेतनस्य अर्धाधिकं भागं कुत्र प्रेषयति स्म?
   (घ) श्रीनायारस्य नेत्रतीराद् विगलिता अश्रुधारा किम् अकरोत्?
   (ङ) बहुदिनेभ्यः स्थगितानां समस्यानां समाधानं कदा जातम्?
   (च) श्रीनायारस्य पार्श्वे पत्रं कया प्रेषितम्?
   (छ) आश्रमे के लालिताः पालिताश्च भवन्ति?
   (ज) पत्रलेखिका कस्य हस्तयोः अनाथाश्रमं समर्प्य सौप्रस्थानिकीमिच्छति?

2. **सप्रसङ्गं हिन्दीभाषया व्याख्यां कुरुत ।**
   (क) उपभोक्तृणामपि अभियोगो नास्ति विभागस्य विपक्षे
   (ख) सर्वे अश्रुलहृदयैः सौप्रस्थानिकीं ज्ञापितवन्तः
   (ग) त्वया निर्मितोऽयं क्षुद्रोऽनाथाश्रमोऽधुना महाद्रुमेण परिणतः।

3. **अधः समस्तपदानां विग्रहाः दत्ताः, तानाश्रित्य समस्तपदानि रचयत समासनामापि लिखत।**

(क) कालस्य खण्डः तस्मिन् = ...

(ख) कर्मसु नैपुण्यम् = ...

(ग) द्वि च त्रि च अनयोः समाहारः, तेषाम् = ...

(घ) दीर्घः अवकाशः, तम् = ...

(ङ) धनाय आदेशः, तेन = ...

(च) जीवनस्य प्रदीपः = ...

4. **रेखाङ्कितपदानि आधृत्य प्रश्ननिर्माणं कुरुत ।**

(क) श्रीनायारः स्वल्पभाषी आसीत्।

(ख) वर्षत्रयस्य आकलनात् ज्ञायते यत् विभागस्य कार्यनैपुण्यं दशगुणैः वर्धितम्।

(ग) तस्य राज्येन सह कश्चित् सम्पर्कः नास्ति।

(घ) पत्रस्य अर्धाधिकं भागं अश्रुधारा आर्द्रीकरोति स्म।

(ङ) श्रीदासः तत्पत्रमुद्घाटितवान्।

(च) भगवान् त्वां दीर्घजीवनं कारयतु।

5. **विपरीतार्थकपदानि मेलयत ।**

(क) आगत्य		(क) विस्मृतः
(ख) इच्छाम्	______	(ख) गत्वा
(ग) स्वल्पभाषी		(ग) न्यूनीभूतम्
(घ) प्रारभ्य		(घ) पक्षे
(ङ) अधिकीभूतम्		(ङ) बहुभाषी
(च) विपक्षे		(च) समाप्य
(छ) स्मृतः		(छ) लघुजीवनम्
(ज) दीर्घजीवनम्		(ज) अनिच्छाम्

6. **अधोलिखितानां विशेष्यपदानां विशेषणपदानि पाठात् चित्वा लिखत ।**

वार्तालापः, वर्षत्रयस्य, अश्रुधारा, समस्यानाम्, व्यवहारः, पत्रम्, शिशवः।

7. **अधोलिखितेषु पदेषु प्रकृतिप्रत्ययविभागं कुरुत ।**

समाप्य, जातम्, त्यक्त्वा, धृत्वा, पठन्, संपोष्य।

योग्यताविस्तारः

1. प्रस्तुतकथायाः मूललेखकः श्रीचन्द्रशेखरदासवर्मा ओडियासाहित्यक्षेत्रे लब्धप्रतिष्ठः कथाकारो वर्तते। अस्य जन्म 1945 तमे ईशवीयसंवत्सरे अभवत्। अस्य द्वादशकथाग्रन्थाः, एकः नाट्यसङ्ग्रहः त्रयः समीक्षा-ग्रन्थाश्च प्रकाशिताः सन्ति। पाषाणीकन्या वोमा च श्रीवर्मणः प्रसिद्धौ कथासंग्रहौ स्तः। 'दीनबन्धुः श्रीनायारः' इति कथा पाषाणीकन्या इति कथासंग्रहात् संकलिता।
2. भारतस्य प्रदेशाः- भारतवर्षे अष्टाविंशति-प्रदेशाः वर्तन्ते। षट् केन्द्रशासितप्रदेशाः सन्ति।
3. अत्रत्याः जनाः विविधभाषाभाषिणः सन्तिः। हिन्दीम् आङ्ग्लभाषां च अतिरिच्य मलयालम-तमिल-उडिया-बङ्गला-गुजराती-मराठी-कोंकणी-कन्नड-असमिया-पञ्जाबी भाषाः अत्रत्याः जनाः वदन्ति।
4. पत्रलेखनं साहित्ये प्रसिद्धा विधा वर्तते।

   प्रस्तुतपाठे समागतं पत्रम् अवलोक्य स्वकीयान् विचारान् संस्कृतेन लिखत।





12078CH11

एकादशः पाठः

उद्भिज्ज-परिषद्

प्रस्तुत पाठ 'उद्भिज्ज–परिषद्' पण्डित हृषीकेश भट्टाचार्य की निबन्ध पुस्तक 'प्रबन्ध मञ्जरी' से संक्षिप्त करके लिया गया है। श्रीभट्टाचार्य का समय 1850–1913 ई. है। संस्कृत के आधुनिक गद्यकारों में इनका अन्यतम स्थान माना जाता है। निबन्ध–लेखन की दृष्टि से तो ये अद्वितीय हैं। ये ओरियन्टल कॉलेज, लाहौर में संस्कृत के प्राध्यापक थे। इन्होंने 'विद्योदय' नामक संस्कृत पत्रिका का 44 वर्षों तक बड़ी योग्यता के साथ सम्पादन किया। इनका 'प्रबन्ध–मञ्जरी' नामक लेख–संग्रह–ग्रन्थ 1930 में प्रकाशित हुआ था। इस ग्रन्थ की भाषा अत्यन्त सरल, सरस तथा प्रवाहपूर्ण है। इनकी भाषा में महाकवि बाण की शैली की छाप स्पष्ट देखी जा सकती है।

उद्भिज्ज शब्द का अर्थ है- वृक्ष और परिषद् का अर्थ है सभा। इस शब्द का अर्थ हुआ 'वृक्षों की सभा।' इस सभा के सभापति हैं अश्वत्थ–पीपल। वे अपने भाषण में मानवों पर बड़े ही व्यंग्यपूर्ण प्रहार करते हैं।



अथ सर्वविधविटपिनाम् मध्यभागे स्थितः सुमहानअ-श्वत्थदेवः वदति-भो! भो! वनस्पतिकुलप्रदीपा महापादपाः कुसुमकोमलदन्तरुचः लता- कुलललना-श्च! सावहिताः शृण्वन्तु भवन्तः। अद्य मानववार्तैवास्माकं समालोच्यविषयः। मानवा नाम सर्वासु सृष्टिधारासु निकृष्टतमा सृष्टिः, जीवसृष्टिप्रवाहेषु मानवा इव पर-प्रतारकाः स्वार्थसाधनपरा मायाविनः कपट-व्यवहारकुशलाः हिंसानिरताः जीवाः न विद्यन्ते। भवन्तो नित्यमेवारण्यचारिणः सिंहव्याघ्रप्रमुखान् हिंस्रत्वभावनया प्रसिद्धान् श्वापदान् अवलोकयन्ति। ततो भवन्त एव कथयन्तु याथातथ्येन किमेते हिंसादिक्रियासु मनुष्येभ्यो भृशं गरिष्ठाः। श्वापदानां हिंसाकर्म किल जठरानलनिर्वाणमात्रप्रयोजकम्। प्रशान्तजठरानले सकृदुपजातायां स्वोदरपूर्तौ नहि ते करतलगतानपि हरिणशशकादीन् उपघ्नन्ति। न वा तथाविध-दुर्बलजीवानां घातार्थम् अटवीतोऽटवीं परिभ्रमन्ति।

मनुष्याणां हिंसावृत्तिस्तु निरवधिः। पशुहत्या तु तेषाम् आक्रीडनम्। केवलं विक्लान्तचित्तविनोदाय महारण्यम् उपगम्य ते यथेच्छं निर्दयं च पशुघातं कुर्वन्ति। तेषां पशुप्रहार-व्यापारमालोक्य जडानामपि अस्माकं विदीर्यते हृदयम्।

निरन्तरम् आत्मोन्नतये चेष्टमानाः लोभाक्रान्त-हृदयाः मनुजन्मानः किल प्रतिक्षणं स्वार्थसाधनाय सर्वात्मना प्रवर्तन्ते। न धर्ममनुधावन्ति, न सत्यमनुबध्नन्ति। परं तृणवद् उपेक्षन्ते स्नेहम्। अहितमिव परित्यजन्ति आर्जवम्। अमङ्गलमिव उपघ्नन्ति विश्वासम्। न स्वल्पमपि बिभ्यति पापाचारेभ्यः, न किञ्चिदपि लज्जन्ते मुहुरनृतव्यवहारात्। नहि क्षणमपि विरमन्ति परपीडनात्।

न केवलमेते पशुभ्यो निकृष्टास्तृणेभ्योऽपि निस्सारा एव। तृणानि खलु वात्यया सह स्वशक्तितः सुचिरमभियुध्य सम्मुखसमरप्रवर्तमाना वीरपुरुषा इव शक्तिक्षये क्षितितले निपतन्ति, न तु कदाचित् कापुरुषा इव स्वस्थानम् अपहाय प्रपलायन्ते। मनुष्याः पुनः स्वचेतसा एव भविष्यत् समये सङ्घटिष्यमाणं कमपि विपत्पातमाकलय्य परिकम्पमानकलेवराः दुःख-दुःखेन समयमतिवाहयन्ति। परिकल्पयन्ति च पर्याकुला बहुविधान् प्रतिकारोपायान् येन मनुष्यजीवने शान्तिसुखं मनोरथपथादतिक्रान्तमेव।

अथ ते तावत्तृणेभ्योऽप्यसाराः पशुभ्योऽपि निकृष्टतरा-श्च। तथा च तृणा-दिसृष्टेरनन्तरं तथाविधजीवनिर्माणं वि-श्वविधातुः कीदृशं नाम बुद्धिमत्ताप्रकर्षं प्रकटयति।

इत्येव हेतुप्रमाणपुरस्सरं सुचिरं बहुविधं विशदं च व्याख्याय सभापतिर-श्वत्थदेव उद्भिज्ज-परिषद् विसर्जयामास।

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

उद्भिज्जः	–	(उद्भिज्य जायते इति उद्भिज्जः) वनस्पति
विटपी	–	(विटप + इन्) वृक्ष
अश्वत्थः	–	पीपल का पेड़
कुलललनाः	–	कुलस्य ललनाः, कुल की स्त्रियाँ
सावहिता	–	सावधान
सृष्टिधारासु	–	सृष्टेः धारा, षष्ठी तत्पुरुष समास सृष्टिधारा, तासु, सृष्टि की परम्परा में
निकृष्टतमा	–	निकृष्ट + तमप्, अत्यधिक नीच
परप्रतारकाः	–	परस्य प्रतारकः, षष्ठी तत्पुरुष समास, दूसरे को पीड़ित करने वाले
श्वापदान्	–	जंगली जानवरों को
याथातथ्येन	–	वस्तुतः
भृशम्	–	अत्यधिक
जठरानल-निर्वाणम्	–	जठरानलस्य निर्वाणम् षष्ठी तत्पुरुष समास, पेट की अग्नि, भूख की शान्ति
करतलगतान्	–	करतलगतान्, हाथ में आये हुए
उपघ्नन्ति	–	उप + हन् + लट् लकार, प्रथम पुरुष, बहुवचन, मारते हैं
घातार्थम्	–	मारने के लिए
अटवीतः अटवीम्	–	अटवी + तस्, एक जंगल से दूसरे जंगल को
निरवधिः	–	असीम
आक्रीडनम्	–	आ + कीड् + ल्युट् प्रत्यय, खेल

विक्लान्तः	–	वि + क्लम् + क्त प्रत्यय, थका हुआ
उपगम्य	–	उप + गम् + क्त्वा (ल्यप् प्रत्यय), पास जाकर
सर्वात्मना	–	पूरे मन से (सभी प्रकार से)
प्रवर्तन्ते	–	प्र + वृत् + लट् लकार प्रत्यय, प्रथम पुरुष बहुवचन, प्रवृत्त होते हैं।
उपेक्षन्ते	–	उप + ईक्ष् + लट्, लकार प्रथम पुरुष बहुवचन, उपेक्षा करते हैं।
आर्जवम्	–	ऋजोर्भावः आर्जवम्, सीधापन
बिभ्यति	–	भी + लट् लकार प्रथम पुरुष बहुवचन, डरते हैं।
पापाचारेभ्यः	–	पापश्चासौ आचारः, पापाचारः तेभ्यः, अनुचित आचरण से
विरमन्ति	–	वि + रम् धातु + लट् लकार + प्रथम पुरुष बहुवचन, रुकते हैं।
वात्यया	–	आँधी से
अभियुध्य	–	अभि + युध् + क्त्वा (ल्यप्) प्रत्यय संघर्ष करके
कापुरुषाः	–	कायर
प्रपलायन्त	–	प्र + परा + अय् + लङ् लकार, भागते हैं, प्रथम पुरुष, बहुवचन
अग्रतः	–	अग्र + तस्, आगे
सङ्घटिष्यमाणं	–	सम् + घट् + शानच् प्रत्यय, घटित होने वाले
परिकम्पमानः	–	परि + कम्प् + कानच् प्रत्यय, प्रथमा विभक्ति एकवचन, काँपता हुआ
अतिवाहयन्ति	–	अति + वह् + णिच् + लट् लकार, प्रथमपुरुष बहुवचन बिताते हैं।
पर्याकुलाः	–	परि + आकुलाः, बेचैन
अतिक्रान्तम्	–	अति + क्रम् + क्त प्रत्यय, प्रथम पुरुष एकवचन, बाहर जा चुका है।
अप्यसाराः	–	अपि + असाराः, सारहीन
प्रकर्षम्	–	अधिकता
पुरस्सरम्	–	पुरः सरतीति पुरस्सरः तम्, आगे

अभ्यासः

1. संस्कृत भाषया उत्तरत ।

(क) उद्भिज्जपरिषद् इति पाठस्य लेखकः कः अस्ति?

(ख) उद्भिज्जपरिषदः सभापतिः कः आसीत्?

(ग) अश्वत्थमते मानवाः तृणवत् कम् उपेक्षन्ते?

(घ) सृष्टिधारासु मानवो नाम कीदृशी सृष्टिः?

(ङ) मनुष्याणां हिंसावृत्तिः कीदृशी?

(च) पशुहत्या केषाम् आक्रीडनम्?

(छ) श्वापदानां हिंसाकर्म कीदृशम्?

2. रिक्तस्थानानि पूरयत ।

(क) मानवा नाम सर्वासु सृष्टिधारासु .... सृष्टिः।

(ख) मनुष्याणां .... निरवधिः।

(ग) नहि ते करतलगतानपि .... उपघ्नन्ति।

(घ) परं तृणवद् उपेक्षन्ते .... ।

(ङ) न केवलमेते पशुभ्यो निकृष्टास्तृणेभ्योऽपि .... एव।

3. अधोलिखितानां पदानां वाक्येषु प्रयोगं कुरुत ।

मायाविनः, श्वापदान्, निरवधिः, विसर्जयामास, बिभ्यति, पर्याकुलाः, लज्जन्ते, विरमन्ति, कापुरुषाः, प्रकटयति।

4. सप्रसङ्गं हिन्दीभाषया व्याख्या कार्या ।

मनुष्याणां हिंसावृत्तिस्तु निरवधिः। पशुहत्या तु तेषाम् आक्रीडनम्। केवलं विक्लान्तचित्तविनोदाय महारण्यम् उपगम्य ते यथेच्छं निर्दयं च पशुघातं कुर्वन्ति। तेषां पशुप्रहार-व्यापारमालोक्य जडानामपि अस्माकं विदीर्यते हृदयम्।

5. प्रकृति-प्रत्ययविभागः क्रियताम् ।

निकृष्टतमा, उपगम्य, प्रवर्तमाना, अतिक्रान्तम्, व्याख्याय, कथयन्तु, उपघ्नन्ति, आक्रीडनम्

6. सन्धिविच्छेदं कुरुत ।

मानवा इव, भवन्तो नित्यम्, स्वोदरपूर्तिम्, हिंसावृत्तिस्तु, आत्मोन्नतिम्, स्वल्पमपि

7. अधोलिखितानां समस्तपदानां विग्रहं कुरुत ।

महापादपाः, सृष्टिधारासु, करतलगतान्, वीरपुरुषाः, शान्तिसुखम्

योग्यताविस्तारः

(1) प्रचुरोदकवृक्षो यो निवातो दुर्लभातपः।
अनूपो बहुदोषश्च समः साधारणो मतः॥ *चरकसंहिता*

(2) मानवं पुत्रवद् वृक्षास्तारयन्ति परत्र च।
पुत्रवत्परिपाल्यास्ते पुत्रास्ते धर्मतः स्मृताः॥ *महाभारत अनुशासनपर्व*

(3) एतेषां सर्ववृक्षाणां छेदनं नैव कारयेत्।
चातुर्मासे विशेषेण विना यज्ञादिकारणम्॥ *महाभारत अनुशासनपर्व*

(4) एकेनापि सुवृक्षेण पुष्पितेन सुगन्धिना।
वासितं वै वनं सर्वं सुपुत्रेण कुलं यथा॥ *महाभारत अनुशासनपर्व*

(5) ''दशकूपसमा वापी दशपुत्रसमो द्रुमः''।
वृक्षविषयिण्यः ईदृश्य अन्या सूक्तयोऽपि गवेषणीयाः॥





12078CH12

द्वादशः पाठः

किन्तोः कुटिलता

यह पाठ देवर्षि श्रीकलानाथ शास्त्री द्वारा सम्पादित पं. श्री भट्ट मथुरानाथ शास्त्री के निबन्धसंग्रह 'प्रबन्ध-पारिजातः' से संकलित किया गया है।

पं. भट्ट मथुरानाथ शास्त्री के पिता पं. भट्ट द्वारकानाथ जयपुर निवासी थे। पं. भट्ट मथुरानाथ का जन्म जयपुर में सन् 1889 ई. में हुआ और निधन भी वहीं 4 जून, 1964 ई. को हुआ। आपकी पूर्वज परम्परा अत्यन्त प्रतिभा सम्पन्न रही। इन्होंने महाराजा संस्कृत कॉलेज से साहित्याचार्य की उपाधि प्राप्त की और वहीं व्याख्याता बन गए। आप जयपुर से प्रकाशित 'संस्कृतरत्नाकर' पत्रिका के सम्पादक रहे। भट्ट मथुरानाथ शास्त्री प्रणीत संस्कृत की रचनाओं में 'जयपुरवैभवम्', 'गोविन्दवैभवम्', 'संस्कृतगाथासप्तशती' और 'साहित्यवैभवम्' विशेष उल्लेखनीय हैं। इनके अतिरिक्त इन्होंने चालीस कथाएँ और सौ से भी अधिक निबन्ध संस्कृत में लिखे। इनकी 'सुरभारती', 'सुजन-दुर्जन-सन्दर्भः' और 'युद्धमुद्धतम्' नामक पद्य रचनाएँ भी उल्लेखनीय हैं।

यहाँ संकलित पाठ में श्री भट्ट जी ने दिखाया है कि जब कभी किसी कथन के साथ 'किन्तु' लग जाता है, तब बहुधा वह पहले कथन के अच्छे भाव को समाप्त कर उसे दोषपूर्ण और सम्बोधित व्यक्ति के लिए दुःख पैदा करने वाला, उसके उत्साह का नाशक और शत्रुरूप बना देता है। ऐसे अवसर विरल होते हैं जहाँ 'किन्तु' सम्बोधित व्यक्ति के लिए सुखदायक सिद्ध होता है।

लेख की भाषा सरल व सुबोध है, अलंकारों और दीर्घ समासों आदि का प्रयोग नहीं किया गया है। भाव सुस्पष्ट और सामान्य जीवन में जनसाधारण द्वारा अनुभूत हैं।

कुटिलेनामुना 'किन्तु'-ना कियत्कालात् क्लेशितोऽस्मि। यत्र यत्राहं गच्छामि तत्र तत्रैवास्य शत्रुता सम्मुखस्थिता भवति। अस्य 'किन्तोः' कारणात् कस्मिन्नपि कार्ये सफलता दुर्घटास्ति। बहून् वारान् दृष्टवानस्मि यत्कार्यं सर्वथा सज्जं सम्पद्यते, सर्वप्रकारैः सिद्धिर्हस्तगता भवति, यथैव सफलताया मूर्तिः सम्मुखमागच्छन्ती विलोक्यते तथैव क्रूरोऽयं किन्तुर्मध्ये प्रविश्य सर्वं विनाशयति।

राज्यतो लब्धाया भूमेरभियोगो बहोः कालान्न्यायालये चलति स्म। अस्मिन्नभियोगे प्राड्विवाकमहोदयो निर्णयं श्रावयन् अवोचत् ···'वयं पश्यामो यदभियोक्तुः पक्षादावश्यकानि सर्वाण्येव प्रमाणान्युपस्थितानि सन्ति। राज्यतो लब्धाया भूमेर्दानपत्रमप्युपस्थापितमस्ति। न्यायालयेन परिज्ञातं यत् इयं भूमिरभियोक्तुरधिकारभुक्ताऽस्ति·········।'

अहं निश्चिन्ततताया एकं शान्तं निः-श्वासममुचम्। मया सर्वथा स्थिरीकृतं यद्भाग्यलक्ष्मीरनुपदमेव मे कन्धरायां विजयमाल्यं प्रददातीति। परं प्राड्विवाकमहोदयः पुनरग्रे प्रावोचत् ··· '········· किन्तु राजस्व-विभागस्य प्रधानः किलैकोऽधिकारी एतद्विरोधे एकं पत्रं प्रेषितवानस्ति। एतदुपर्यपि लक्ष्यदानमावश्यकं मन्यामहे।' मम सर्वोऽप्युत्साहः पलायाञ्चक्रे। 'किन्तु'-कुन्तो ममान्तःकरणं समन्तात् कृन्तति स्म। निजहृदयमवष्टभ्य न्यायं प्रशंसन् गृहमागमम्।

दृष्टं मया यदेष 'किन्तुः' दयाधर्मादिष्वपि अनधिकारचेष्टातो न विरतो भवति। प्रातः कालस्यैव कथास्ति··· धर्मव्यवस्थापकमहोदयस्य समीपे एको दीनः करुणक्रन्दनपुरःसरं न्यवेदयत्··· 'महाराज! नववार्षिकी मे कन्या। जातस्य तस्या विवाहस्य अद्य तृतीयो दिवसः। नाद्यापि चतुर्थीकर्म सम्पन्नं येन विवाहः पूर्णः परिगण्येत। तस्याः पतिः सहसाऽम्रियत। हा हन्त! तस्या अबोधबालिकाया अग्रे किं भावि? अस्तकर्मसङ्ख्यावृद्धौ किं ममोच्चकुलमपि सहायकं भविष्यति? आज्ञापयन्तु श्रीमन्तः किं मया साम्प्रतं कर्त्तव्यम्।'

पण्डितमहोदयो गभीरतममुद्रयाऽवोचत्...'अवश्यमिदं दयास्थानम्। वर्तमानकाले समाजस्य भीषणपरिस्थितेः पर्यालोचन इदमेवोचितं प्रतीयते यत् एवंविधस्थले पुनर्विवाहस्य व्यवस्था दीयेत... 'किन्तु' वयं मुखेन कथमेतत् कथयितुं शक्नुमः। प्राचीनमर्यादापि तु रक्षितव्या स्यात्।'

कुत्रचित् सोऽयं 'किन्तुः' नितान्तमनुतापं जनयति। अनेकवर्षाणां परिश्रमस्य फलस्वरूपं मन्निर्मितमेकं नवीनसंस्कृतपुस्तकमादाय साहित्यमर्मज्ञस्य एकस्य देशनेतुः समीपेऽगच्छम्। 'नेतृ'- महोदयः पुस्तकस्य गुणान् सम्यक् परीक्ष्य प्रसन्नः सन्नवोचत्.
.. 'पुस्तकं वास्तव एव अद्भुतं निर्मितमस्ति। बहुकालानन्तरं संस्कृते एवंविधा नवीनता

दृष्टिगताऽभवत्। ⋯ 'किन्तु' मत्सम्मत्यां तदिदं पुस्तकं भवान् संस्कृते न विलिख्य यदि हिन्दीभाषायामलिखिष्यत् तर्हि सम्यगभविष्यत्।'

गृहं प्रति निवर्तमानोऽहं 'किन्तु' कृताया अस्या मर्मवेधकशिक्षाया उपरि समस्तेऽपि गृहमार्गे कर्णं मर्दयन्नगच्छम्। अनेन 'किन्तु'-ना मह्यं सा शिक्षा दत्तास्ति यद्यहं सत्पुरुषः स्यां तर्हि पुनरस्मिन् मार्गे पदनिक्षेपस्य नामापि न गृह्णीयाम्।

कदाचित् कदाचित्त्वयं क्रूरः 'किन्तुः' मुखस्य कवलमप्याच्छिनत्ति। स्वल्प-दिनानामेव वार्तास्ति। आयुर्वेदमार्तण्डस्य श्रीमतः स्वामिमहाभागस्य औषधिं निषेव्य अधुनैवाहं नीरोगोऽभवम्। अस्मिन्नेव समये मित्रगोष्ठ्या निमन्त्रणं प्राप्नवम्। भोजनगोष्ठ्यां समवेतुं ममापीच्छाशक्तौ प्राबल्यस्य प्रवाहः पूर्णमात्रायां प्रवर्द्धमान आसीत्। अहं स्वामिमहोदयमप्राक्षम्...'किमहं तत्र गन्तुं शक्नोमि।' उत्तरमलभ्यत... 'तादृशी हानिस्तु नास्ति। 'किन्तु' गरिष्ठवस्तुनो भोजने अवधानमत्यावश्यकम् अधुनापि दौर्बल्यमस्ति।'

उत्साहस्य ज्वाला या पूर्वं प्रचण्डतमा आसीत् अर्द्धमात्रायां तु तत्रैव निर्वाणाभवत्। अस्तु येन केनापि प्रकारेण भोजनगोष्ठ्याविशेषाधिवेशनेऽस्मिन् सम्मिलितस्त्वभवमेव। भोजनपीठे अधिकारं कुर्वन्नेवाहमपश्यं यत् सर्वाङ्गपूर्णा एका भोज्यव्य-ञ्जनानां प्रदर्शनी सम्मुखे वर्तत इति। धीरगम्भीरक्रमेणाहं भोजनकाण्डस्यारम्भमकरवम्। अहं मोदकस्यैकं ग्रासमगृह्णम्। तस्य स्वादसूत्रेण सन्दानितोऽहं यथैव द्वितीयं ग्रासमगृह्णं तथैव 'स्वामिमहोदयस्य 'किन्तु' मम कण्ठनलिकामरुधत्। मुखस्य ग्रासो मुख एवाऽभ्राम्यत् अग्रे गन्तुं नाशक्नोत्। 'किन्तोः' भीषण-विभीषिका प्रत्येकवस्तुनि गरिष्ठतां सम्पाद्य भोजनं तत्रैव समाप्तमकरोत्।'

अहं देशसेवां कर्तुं गृहाद् बहिरभवम्। मया निश्चितमासीत् 'एतावन्ति दिनानि स्वोदरसेवायै क्लिष्टोऽभवम्। इदानीं कियन्तं कालं देशसेवायामपि लक्ष्यं ददामि।' यथैवाहं मार्गेऽग्रेसरो भवामि, तथैव मम बाल्याध्यापकमहोदयः सम्मुखोऽभवत्। मास्टरमहोदयेन प्रस्थानहेतौ पृष्टे सति सम्पूर्णसमाचारनिवेदनं ममाऽऽवश्यकमभूत्। अध्यापकमहोदयः प्रावोचत्...'तात, सर्वमिदं सम्यक्। किन्तु स्वगृहाभिमुखमपि किञ्चिद्विलोकनीयं भवेत्। येषां भरणपोषणं भवत्येवायत्तं तान् किं भवान् निराधारमेव निर्मुच्य स्वैरं गन्तुमर्हेत्।'

पुनः किमासीत्। अत्रैव परोपकारविचाराणाम् इतिश्रीरभूत्। 'किन्तु'- महोदयेन देशसेवायाः सर्वापि विचारपरम्परा परपारे परावर्त्यत। गृहाभिमुखं मुखं कुर्वन् तस्मात् स्थानादेव परावर्तिषि।

मयानुभूतमस्ति यदयं कुटिलः 'किन्तुः' नानादेशेषु नानारूपाणि सन्धार्य गुप्तं विचरति। यथैव लोकानां कार्यसिद्धेरवसरः समुपतिष्ठते तथैवायं प्रकटीभूय लोकानां कार्याणि यथावस्थितमवरुणद्धि। अहमेतस्य 'किन्तु'-कुठारस्य कठोरतया नितान्तमेव तान्तोऽस्मि। अहं वाञ्छामि यदेतस्याक्रमणात् सुरक्षितो भवेयम्। परं नायं मां त्यक्तुमिच्छति। बहवो मार्मिका मामबोधयन् यत् 'त्वम् एतं सम्मुखमायान्तं दृष्ट्वैव कथं वित्रस्यसि, कुत श्च एनमपसारयितुं प्रयतसे? किमेनं सर्वथा अहितकारिणमेव निर्ि श्चतवानसि? नेदं सम्यक्। पशुघातकस्य छुरिकापि पाशपतितस्य गलबन्धनं छित्त्वा समये प्राणरक्षां कुर्वती दृष्टा।' अहमपि सत्यस्यैकान्ततोऽपलापं न करिष्यामि। एतस्य कथनस्य सत्यताया मयापि परिचयः कदाचित् कदाचित् प्राप्तोऽस्ति।

'शब्दैः प्रतीयते यद् गृहे चौरः प्रविष्टोऽस्ति' इति सभयमनुलपन्ती गृहिणी रात्रौ मामबोधयत्। अहं निजशौर्यं प्रकाशयन् महता वीरदर्पेण लगुडमात्रमादाय अन्धकार एव चौरनिग्रहाय प्रचलितोऽभवम्। गृहिणी कर्णसमीप आगत्य शनैरवदत्... "अन्धकारेऽस्मिन् यासि त्वमवश्यम्, 'किन्तु' दृश्यतां स शस्त्रं न प्रहरेत्।"

पुनः किमासीत्। मम वीरदर्पस्य शौर्यस्य च प्रज्ज्वलितं ज्योतिस्तत्रैव निर्वाणमभूत्। चौरनिग्रहः कीदृशः, निजप्राणपरित्राणमेव मे अन्वेषणीयमभवत्। लगुडं प्रक्षिप्य कोष्ठके निलीनोऽभवम्। तत एव च कम्पित-कण्ठेन चीत्कारमकरवम्--'लोकाः! आगच्छत, चौरः प्रविष्टोऽस्ति।'

एकेन अमुना 'किन्तु' - ना चौरस्य चपेटाभ्योऽवमुच्य सौख्यस्य सुरक्षिते प्रकोष्ठकेऽहं प्रवेशितः। अनेन किन्तुना कस्मिन्नपि सङ्कटसमये कदाचित् किञ्चित्कार्यं कामं कृतं स्यात् परं भूयसा तु अस्माद् भयमेव भवति। अस्य हि सार्वदिकः स्वभाव एव यत् वार्ता काममुत्तमास्तु अधमा वा परमयं मध्ये प्रविष्य तस्याः कथाया विच्छेदमवश्यं करिष्यति। अतएव कस्मिन्नपि समये कार्यसाधकत्वेऽपि लोका अस्माद् वित्रस्यन्त्येव। वैरिणां भारावताराय कदाचित् हिताधराऽपि करवालधारा क्रूराकारा

प्रखरप्रकारा एव प्रसिद्धा लोकेषु। विगुणः कार्षापणः, कुत्सित-श्च पुत्रः सङ्कटे कदाचिदुपयुक्तो भवेत् परन्तु जनसमाजे द्वयोरुपर्येव नासा- भ्रूसङ्कोचो जातो जनिष्यते च। इदमेव कारणं यत् यस्यां वार्तायां 'किन्तुः' उत्पद्यते तां वार्तां लोका विगुणां गणयन्ति।

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

अभियोगः	–	मुकदमा, अभि + युज् + घञ्, पुल्लिङ्ग, प्रथम पुरुष एकवचन
अभियोक्तुः	–	मुद्दई का, मुकदमा चलाने वाले का, अभि + युज् + तृ। ऋकारान्त पुल्लिङ्ग, पञ्चमी एकवचन।
दुर्घटा	–	असम्भव, दुःखेन घटायितुं शक्या, दुर् + घट् + आ
कुन्तः	–	भाला
मुद्रा	–	मुखाकृति
प्राबल्यस्य	–	प्रबलता का, वेगपूर्वक, प्र + बल + ष्यञ्, नपुंसक लिङ्ग, षष्ठी एकवचन
निर्वाणा	–	समाप्त हो चुकी, निर् + वा + क्त, स्त्रीलिङ्ग, प्रथमपुरुष, एकवचन
इतिश्रीः	–	समाप्ति
मार्मिकः	–	तत्त्वज्ञ, विषयज्ञ, मर्म + ठक्, प्रथमपुरुष एकवचन
प्राड्विवाकः	–	जज, न्यायाधीश
लक्ष्यदानम्	–	दृष्टिपात, ध्यानदेना, लक्ष्यस्य दानम्, षष्ठी तत्पुरुष
चतुर्थीकर्म	–	विवाहोपरान्त चौथे दिन किया जाने वाला कर्म, चतुर्थे अहनि क्रियमाणं कर्म, मध्यमपद, लोपी समास
कवलम्	–	ग्रास
अवधानम्	–	सावधानी, परहेज, अव + धा + ल्युट् प्रत्यय
विभीषिका	–	भय, डर, वि + भी + षिच् + ण्वुल् + टाप्, प्रत्यय षुकागम और इत्व
तान्तः	–	पीड़ित, परेशान
परिगण्येत	–	गिना जाए, परि + गण् (संख्याने) + विधिलिङ्

कन्धरायाम्	–	गले में, गर्दन पर (में)
साम्प्रतम्	–	अभी, वर्तमान में, सम्प्रति एव साम्प्रतम्
गभीरतमम्	–	गम्भीरतम, गभीर + तमप्
पर्यालोचने	–	देखने पर, समग्र दृष्टिपात करने पर, परि + आ + लोच् + ल्युट्, सप्तमी विभक्ति, एकवचन (दर्शन, अंकन)
न्यवेदयत्	–	निवेदन किया, नि + अवेदयत्, विद् (ज्ञाने) धातु लङ्, लकार णिजन्त, प्रथमपुरुष, एकवचन
पदनिक्षेप	–	कदमरखना, पदयोः निक्षेपः, षष्ठी तत्पुरुष
अनुतापम्	–	पश्चात्ताप, पछतावा, अनु + तापम्
विलोक्यते	–	देखा जाता है, वि + लोक् (दर्शन, अंकन) + यक्, लट् लकार आत्मनेपद, प्रथमपुरुष, एकवचन भावे प्रयोगः
अवष्टभ्य	–	रोककर, अव + स्तम्भ् (अवरोध) + ल्यप् प्रत्यय
परित्राणम्	–	रक्षण, बचाव, परि + त्रैङ् (पालने) + ल्युट्, नपुंसकलिङ्ग प्रथमपुरुष एकवचन
अन्वेषणीयम्	–	ढूँढने योग्य, खोजने योग्य, अनु + इष् + अनीयर् प्रत्यय
लगुडम्	–	लाठी, दण्ड
निलीनः	–	छुपा हुआ, नि + ली + क्त प्रत्यय
चपेटाभ्यः	–	ताडन से, थप्पड़ों से
कुत्सितः	–	निन्दित, गर्हित

अभ्यासः

1. संस्कृतेन उत्तरं दीयताम् ।

(क) भूमिविषयके अभियोगे 'किन्तु'-ना का बाधा उपस्थापिता?

(ख) वाक्यमध्ये प्रविश्य सर्वं कार्यं केन विनाश्यते?

(ग) लेखकस्य देशसेवायाः विचारस्य कथम् इतिश्रीरभूत्?

(घ) नेतृमहोदयः पुस्तकप्रशंसां कुर्वन् 'किन्तु' प्रयोगेन कं परामर्शम् अददात्?

(ङ) भोजन-गोष्ठीस्थले कीदृशी प्रदर्शनी समायोजिता आसीत्?

(च) भोजनगोष्ठ्यां लेखकस्य कण्ठनलिकां कः अरुधत्?

(छ) धर्मव्यवस्थापकः विधवायाः पुनर्विवाहमुचितं मन्यमानोऽपि व्यवस्थां किमर्थं न ददौ?

(ज) गृहिणी पत्युः कर्णसमीपे आगत्य शनैः किम् अवदत्?

(झ) लोकाः किन्तु-युक्तां वार्तां केन कारणेन विगुणां गणयन्ति?

(ञ) किन्तोः सार्वदिकः प्रभावः कः?

2. उपयुक्तशब्दान् चित्वा रिक्तस्थानानां पूर्तिः विधेया ।

(दुर्घटा, अवधानम्, सन्दानितः, स्वामिमहोदयम्, संस्कृते, विवाहस्य, शान्तम्, पलायाञ्चक्रे, कालात्, सङ्कटे)

(क) अहम् .... अप्राक्षं किमहं तत्र गन्तुं शक्नोमि।

(ख) अस्य 'किन्तोः' कारणात् कस्मिन्नपि कार्ये सफलता .... अस्ति।

(ग) तस्य स्वादसूत्रेण .... अहं यथैव द्वितीयं ग्रासमगृह्णं तथैव 'किन्तुः' मम कण्ठनलिकामरुधत्।

(घ) गरिष्ठवस्तुनो भोजने .... अत्यावश्यकम्।

(ङ) विगुणः कार्षापणः कुत्सितश्च पुत्रः .... कदाचिदुपयुक्तो भवेत्।

(च) राज्यतो लब्धाया भूमेरभियोगो बहोः .... न्यायालये चलति स्म।

(छ) मम सर्वोऽप्युत्साहः .... ।

(ज) अहं निश्चिन्तताया एकं .... निःश्वासममुचम्।

(झ) जातस्य तस्या .... अद्य तृतीयो दिवसः।

(ञ) बहुकालानन्तरं .... एवं विधां नवीनता दृष्टिगताऽभवत्।

3. अधोलिखितैः उचितक्रियापदैः रिक्तस्थानानि पूरयत ।

परिगण्येत, परावर्तिषि, आच्छिनत्ति, मन्यामहे, दीयेत, अलिखिष्यत्

(क) प्रधानः एकं पत्रं प्रेषितवानस्ति। एतदुपर्यपि लक्ष्यदानमावश्यकं ....।

(ख) गृहाभिमुखं मुखं कुर्वन् तस्मात् स्थानादेव ....।

(ग) यदि हिन्दीभाषायाम् .... तर्हि सम्यगभविष्यत्।

(घ) इदमेवोचितं प्रतीयते यत् एवंविधस्थले पुनर्विवाहस्य व्यवस्था ....।

(ङ) कदाचित् कदाचित्त्वयं क्रूरः 'किन्तुः' मुखस्य कवलमपि ....।

(च) नाद्यापि चतुर्थीकर्म सम्पन्नं येन विवाहः ....।

4. **सन्धि-विच्छेदं कुरुत ।**

(क) तत्रैवास्य ....

(ख) सर्वाण्येव ....

(ग) मन्निर्मितमेकम् ....

(घ) किलैकोऽधिकारी ....

(ङ) द्वयोरुपर्येव ....

5. **प्रकृति-प्रत्ययविभागः क्रियताम् ।**

(क) निर्मुच्य ....

(ख) आदाय ....

(ग) प्रविष्टः ....

(घ) आगत्य ....

(ङ) परिज्ञातम् ....

6. **अधोलिखितेषु पदेषु विभक्तिं वचनं च दर्शयत ।**

(क) कार्ये ....

(ख) अभियोक्तुः ....

(ग) बालिकायाः ....

(घ) न्यायालयेन ....

(ङ) नेतुः ....

(च) शक्तौ ....

(छ) औषधिम् ....

7. **स्वरचितवाक्येषु अधोलिखितपदानां प्रयोगं कुरुत ।**

किन्तु, गन्तुम्, मह्यम्, विभीषिका, भरणपोषणम्, दृष्ट्वा।

8. विलोमशब्दान् लिखत ।

(क) विगुणः ....

(ख) शौर्यम् ....

(ग) सुरक्षितः ....

(घ) शत्रुता ....

(ङ) धीरः ....

(च) भयम् ....

योग्यताविस्तारः

1. स्वकल्पनया वाक्यपूर्तिं कुरुत ।

(क) अहम् उच्चाध्ययनं कर्त्तुमिच्छामि, किन्तु .... ।

(ख) छात्राः कक्षायामुपस्थिताः, किन्तु .... ।

(ग) सः गन्तुमिच्छति, किन्तु .... ।

(घ) वयं तर्त्तुमिच्छामः, किन्तु ....।

(ङ) ते कार्यं कर्त्तुमिच्छन्ति, किन्तु ....।

(च) अर्वाचीनाः जना अपि प्राचीनां भाषां पठितुमिच्छन्ति, किन्तु ....।

(छ) निर्धना अपि धनमिच्छन्ति, किन्तु ....।

(ज) सर्वे जना आजीविकामिच्छन्ति, किन्तु ....।

(झ) मूकोऽपि वक्तुमिच्छति, किन्तु ....।

(ञ) अध्यापका अध्यापनं कर्त्तुमिच्छन्ति, किन्तु ....।

2. अधोलिखितानाम् आभाणकानां समानार्थकानि वाक्यानि पाठात् अन्वेष्टव्यानि ।

(क) मुँह का कौर छीनना।

(ख) कुछ दिन पहले की बात है।

(ग) खोटा सिक्का और खोटा बेटा भी समय पर काम आते हैं।

(घ) नाक-भौंह सिकोड़ना।



12078CH13

त्रयोदशः पाठः

योगस्य वैशिष्ट्यम्

प्रस्तुत पाठ पतञ्जलि रचित योगसूत्र पर आधारित है। जिसमें योगाभ्यास के माध्यम से जीवन को संयमित बनाने के लिए शारीरिक, मानसिक एवं बौद्धिक रूप से विशिष्ट उपायों का उल्लेख किया गया है तथा योग के विभिन्न स्वरूपों का सलक्षण वर्णन किया गया है। प्रस्तुत पाठ का संवाद के माध्यम से रोचक रूप में विवेचन किया गया है। पाठ में निहित विषयवस्तु छात्रों के बहुमुखी विकास के लिए अत्यंत उपयोगी है।

(कक्षायाः दृश्यम्– अद्य कक्षा विशेषरूपेण सुसज्जिता अस्ति। भित्तिषु योगविषयस्य विविध–चित्राणि सज्जितानि सन्ति।)

स्वप्निलः – बलराम! अद्य कक्षायां कोऽपि विशिष्टः कार्यक्रमः?

बलरामः – अरे मित्र! त्वं न जानासि? इदानीं तु योगशिक्षायाः कालांशः।

मोहिनी – एषः तु नूतनः विषयः। किं प्रतिदिनम् ईदृशी कक्षा प्रचलिष्यति?

बलरामः – आम्, अधुना तु अस्माकं कृते योगशिक्षा अतीव उपयोगिनी अस्ति।

सागरिका – अहो! सुखदमाश्चर्यम्। अहमपि गृहे मातुः मुखाद् योगशिक्षायाः विषये श्रुतवती। तया उक्तम्– 'योगः स्वास्थ्यकरः।'

सागरः – किं विद्याध्ययनेऽपि अस्योपयोगः वर्तते?

मोहिनी – आम्, अस्मिन् विषये योगशिक्षकः, विशेषरूपेण वदिष्यति।

(योगशिक्षकः कक्षायां प्रविशति)

छात्राः – नमो नमः आचार्य! स्वागतम् अत्र भवतां कक्षायाम्।

योगाचार्यः – छात्राः! भवन्तः सम्प्रति समुत्सुकाः दृश्यन्ते। काऽपि विशिष्टा जिज्ञासा अस्ति किम्?

सागरः – भो आचार्य! वयं सर्वे योगस्य उपयोगितायाः विषये सम्यग्रूपेण ज्ञातुम् उत्सुकाः स्मः।

योगाचार्यः - प्रियच्छात्राः! किं भवन्तः जानन्ति यत् योगशास्त्रे शरीरस्य मनसः च नियमनं प्रतिपादितं वर्तते। अस्य ज्ञानेन अभ्यासेन च भवन्तः स्वाध्यायेऽपि एकाग्रतां वर्धयितुम् सक्षमाः भविष्यन्ति।

मनीषः - अस्माभिः समाचारपत्रेषु पठितम् यत् विश्वेऽपि योगदिवसः सोत्साहम् मान्यते।

योगाचार्यः - साधूक्तम्। जूनमासस्य एकविंशति तमः दिवसः तु अन्ताराष्ट्रिययोगदिवसरूपेण सर्वत्र मान्यते।

मोहिनी - आचार्य! सम्प्रति वयं योगविषये सविस्तरं ज्ञातुम् इच्छामः।

(योगाचार्यः पाठमाध्यमेन योगशिक्षां शिक्षयति)

योगाचार्यः - प्रियच्छात्राः ध्यानेन शृणुत।

योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः।

मोहनः - चित्तवृत्तिनिरोधः! अथ किं तात्पर्यम् अस्य?

योगाचार्यः - चित्तवृत्तीनां भेदः लक्षणम् चावगच्छन्तु प्रथमं, ततः विस्तरेण बोधयामि- 'प्रमाणविपर्ययविकल्पनिद्रास्मृतयः' इति

प्रमाणम् - **अर्थात् प्रत्यक्षानुमानागमाः प्रमाणानि।**

विपर्ययः - **अर्थात् विपर्ययो मिथ्याज्ञानमतद्रूपप्रतिष्ठम्।**

विकल्पः - **अर्थात् शब्दज्ञानानुपाती वस्तुशून्यो विकल्पः।**

निद्रा - **अभावप्रत्ययालम्बनावृत्तिर्निद्रा।**

स्मृतिः - **अनुभूतविषयासम्प्रमोषः स्मृतिः।**

(एतत् सर्वं श्यामपट्टे योगाचार्यः लिखति अवबोधयति च, छात्राः च प्रसन्नमनसा अवगच्छन्ति, स्वपुस्तिकासु चाऽपि लिखन्ति)

सागरः - आचार्य! अन्यदपि ज्ञातुमुत्सुकाः वयं विस्तरेण।

योगाचार्यः - अधुना योगाङ्गानां नामानि लक्षणानि चावबोधयामि-

'यमनियमासनप्राणायामप्रत्याहार-धारणा-ध्यानसमाधयोऽष्टावङ्गानि'

सागरिका - कः तात्पर्यः अस्य एतादृशस्य दीर्घवाक्यस्य?

किञ्चिदपि नावगम्यते........................

योगाचार्यः – अलं चिन्तया, एकैकं कृत्वा बोधयामि।

यमः – **अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहाः यमाः।**

नियमः – **शौचसन्तोषतपःस्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः।**

आसनम् – **स्थिरसुखमासनम्।**

प्राणायामः – **तस्मिन् सति श्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेदः प्राणायामः।**

प्रत्याहारः – **स्वविषयसम्प्रयोगे चित्तस्वरूपानुकार इवेन्द्रियाणां प्रत्याहारः।**

धारणा – **देशबन्धश्चित्तस्य धारणा।**

ध्यानम् – **तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम्।**

समाधिः – **तदेवार्थमात्रनिर्भासं स्वरूपशून्यमिव समाधिः**

एतत्सर्वमपि योगाचार्यः श्यामपट्टे लिखित्वा बोधयति छात्राश्च स्वस्वपुस्तिकासु लिखन्ति, अवबुध्यन्ति च।

स्वप्निलः – आचार्य। योगाङ्गानां नामानि तु अस्माभिः सुष्ठु ज्ञातानि अवबुद्धानि चाऽपि।

साम्प्रतं योगाङ्गानां फलमपि ज्ञातुं महती उत्कण्ठा वर्तते।

योगाचार्यः – आम् आम् तदपि बोधयामि। शृण्वन्तु, लिखन्तु, अवबुध्यन्तु च तावत्–

यमः–

अहिंसा – **अहिंसाप्रतिष्ठायां तत्सन्निधौ वैरत्यागः।**

सत्यम् – **सत्यप्रतिष्ठायां क्रियाफलाश्रयत्वम्।**

अस्तेयम् – **अस्तेयप्रतिष्ठायां सर्वरत्नोपस्थानम्।**

ब्रह्मचर्यम् – **ब्रह्मचर्यप्रतिष्ठायां वीर्यलाभः।**

अपरिग्रहः – **अपरिग्रहस्थैर्ये जन्मकथन्तासम्बोधः।**

बलरामः – अतीव ज्ञानवर्धिका एषा कक्षा। पुस्तकालयं गत्वाऽपि एतावत् ज्ञानं प्राप्तुमशक्यमासीत् यादृशम् अद्य अस्यां कक्षायां प्राप्तम्।

नियमः

शौचम् – **शौचात्स्वाङ्गजुगुप्सा परैरसंसर्गः। सत्त्वशुद्धिसौमनस्य ऐका ग्रेन्द्रियजयात् आत्मदर्शनयोग्यत्वानि च।**

सन्तोषः – **सन्तोषादनुत्तमसुखलाभः।**

तपः – **कार्येन्द्रियसिद्धिः अशुद्धिाक्षयात्तपः।**

स्वाध्यायः – **स्वाध्यायादिष्टदेवतासम्प्रयोगः।**

ईश्वरप्रणिधानम् – **समाधिसिद्धिरीश्वरप्रणिधानात्।**

(तदैव घण्टावादनम् भवति)

सर्वे छात्राः – आचार्य! कृपया आसन-प्राणायामेत्यादिकं स्पष्टीकृत्य एव कक्षां समापयतु। अर्धे मा त्यजतु।

योगाचार्यः – आम् आम् बोधयामि अग्रे अपि।

आसनम् – **ततो द्वन्द्वानभिघातः**

प्राणायामः – **ततः क्षीयते प्रकाशावरणम्। धारणासु च योग्यता मनसः।**

प्रत्याहारः – **ततः परमावश्यतेन्द्रियाणाम्।**

धारणा – **ध्यान-समाधिः- त्रयमेकत्र संयमः। तज्जयात्प्रज्ञालोकः।**

योगाचार्यः – शोभनम्। श्वः प्रायोगिकं व्यवहारं करिष्यामः, येन भवन्तः यमनियमेत्यादीनां प्रत्यक्षमनुभवं विधास्यन्ति।

(एवं कथयित्वा कक्षातः प्रस्थानं करोति आचार्यः। छात्राः अपि हृष्टमनसा परस्परं योगचर्चा कुर्वाणः सन्ति।)

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

भित्तिषु – भित्तियों पर, दीवारों पर (भित्ति, स्त्री., स.वि.,बहु.,व.,)

कोऽपि – कोई भी (कः+अपि)

इदानीम् – जब (अव्यय)

उपयोगिनी – उपयोगी, काम में आने वाली (उप+युज्+घिनुण्+स्त्री.)

उक्तम् – कहा हुआ (वच्+क्त)

स्वागतम् – शुभागमन, सुखद अगवानी (सु+आ+गम्+क्त)

सम्यग्रूपेण – अच्छी तरह से (सम्यक्+रूपेण)

सोत्साहम् – उत्साह के साथ (उत्साहेन सह)

प्रियच्छात्राः	–	प्रिय छात्र, (प्रिय+छात्राः, तुक्)
चित्तवृत्तिः	–	चित्त की चंचलता (चित्तस्य वृत्तिः)
निरोधः	–	रुकावट (नि+रुध्+घञ्)
विपर्ययः	–	विपरीत ज्ञान (वि+परि+इ+अच्)
प्रत्ययः	–	ज्ञान (प्रति+अयः, प्रति+इ+अच्)
विकल्पः	–	शब्दजन्य ज्ञान से रहित
निद्रा	–	अभावजन्यज्ञानाश्रित वृत्ति
स्मृतिः	–	अनुभवजन्य प्रत्यक्षीकरण
अन्यदपि	–	दूसरा भी (अन्यत्+अपि)
यमः	–	नियंत्रण, संयम (यम्+घञ्)
नियमः	–	नियंत्रण (योग का एक भेद)
आसनम्	–	योग में बैठने का ढंग, (आस्+ल्युट्)
प्राणायामः	–	श्वास खींचने, रोकने व निकालने की एक विशेष प्रक्रिया, जो पूरक रेचक, कुम्भक के रूप में होती है (प्राण+आयामः)
प्रत्याहारः	–	इन्द्रियों का दमन (प्रति+आ+हृ+घञ्)
धारणा	–	चित्त को संयमित करने की शक्ति
ध्यानम्	–	मनन, चिन्तन (ध्यै+ल्युट्)
समाधिः	–	ब्रह्मचिन्तन में पूर्णलीनता (सम्+आ+धा+कि)
तत्सन्निधौ	–	उसके पास में (तस्य सन्निधौ)
अहिंसा	–	मन, वचन, कर्म से किसी को पीड़ा न देना (न हिंसा)
सत्यम्	–	वास्तविक, निष्कपटता (सत्+यत्)
अस्तेयम्	–	चोरी न करना (न स्तेयम्)
ब्रह्मचर्यम्	–	संयमित जीवन
अपरिग्रहः	–	संचय न करना (न परिग्रहः)
शौचम्	–	शुचिता, पवित्रता (शुच्+घञ्)
जुगुप्सा	–	घृणा (गुप्+सन्+अ+टाप्)
सन्तोषः	–	संतुष्टि, तृष्णारहित होना (सम्यक् तोषः, सम्+तुष्+घञ्)

अभ्यासः

1. अधोलिखितप्रश्नानां उत्तराणि संस्कृतेन लिखत ।

(क) योगः कः कथ्यते?
(ख) मातुः मुखाद् योगशिक्षायाः विषये का श्रुतवती?
(ग) छात्राः कस्मिन् विषये ज्ञातुम् उत्सुकाः सन्ति?
(घ) प्रमाणानि कानि?
(ङ) स्मृतिः का कथ्यते?
(च) निद्रा का भवति?
(छ) योगाङ्गानि कानि?
(ज) अहिंसा का कथ्यते?
(झ) अपरिग्रहः कः भवति?
(ञ) के नियमाः?

2. वाक्यांशानाम् आशयं स्पष्टीकुरुत ।

(क) स्थिरसुखमासनम्।
(ख) देशबन्धश्चित्तस्य धारणा।
(ग) ब्रह्मचर्यप्रतिष्ठायां वीर्यलाभः।
(घ) सन्तोषादनुत्तमः सुखलाभः।
(ङ) स्वाध्यायादिष्टदेवतासम्प्रयोगः।

3. 'अ'स्तम्भस्य वाक्यांशैः सह 'ब'स्तम्भस्य वाक्यांशान् मेलयत ।

(अ)	(ब)
(क) शब्दज्ञानानुपाती वस्तुशून्यः	धारणा
(ख) स्थिरसुखम्	वीर्यलाभः
(ग) देशबन्ध चित्तस्य	सर्वरत्नोपस्थानम्
(घ) अस्तेयप्रतिष्ठायाम्	विकल्पः
(ङ) ब्रह्मचर्यप्रतिष्ठायाम्	ध्यानम्
(च) प्रत्येकतानता	आसनम्

4. रिक्तस्थानानां पूर्तिं कुरुत ।

(क) योगशास्त्रे शरीरस्य मनस:..............................प्रतिपादनं वर्तते।
(ख) अन्ताराष्ट्रिययोगदिवस: जूनमासस्य..............................मान्यते।
(ग) शौचसन्तोषतप:..............................प्रणिधानानि नियमा:।
(घ) ....क्रियाफलाश्रयत्वम्।
(ङ) ....मिथ्याज्ञानमतद्रूपप्रतिष्ठम्।

5. अधोलिखितपदानां सन्धिं विच्छेदं वा कुरुत ।

(क) स्वागतम् ....+..............................
(ख) कालांश: ....+..............................
(ग) अति+इव ....+..............................
(घ) विद्याध्ययनेऽपि ....+..............................
(ङ) स+उत्साहम् ....+..............................
(च) सम्यग्रूपेण ....+..............................
(छ) सन्निधि: ....+..............................

6. अधोलिखितपदानां मूलशब्दं विभक्तिं वचनं लिङ्गम् च लिखत ।

पदानि	मूलशब्द:	विभक्ति:	वचनम्	लिङ्गम्
(क) अस्माकम्	....	....	....	....
(ख) मनस:	....	....	....	....
(ग) चिन्तया	....	....	....	....
(घ) अङ्गानि	....	....	....	....
(ङ) तस्मिन्	....	....	....	....
(च) महती	....	....	....	....
(छ) प्रतिष्ठायाम्	....	....	....	....

7. पाठमाधृत्य योगस्य महत्तां स्वशब्देषु वर्णयत ।

योग्यताविस्तारः

(अ) योगस्य विशिष्टतत्त्वानि-

(क) ऋतम्भरा तत्र प्रज्ञा। (योगसूत्रम्, साधनपादः, सूत्रसंख्या-48)

(ख) अविद्यास्मितारागद्वेषाभिनिवेशाः क्लेशाः। (योग. सा., सूत्र.-3)

(ग) सुखानुशयी रागः। (योग. सा., सूत्र.-7)

(घ) दुःखानुशयी द्वेषः। (योग. सा., सूत्र.-8)

(ङ) जन्मौषधिमन्त्रतपः समाधिजाः सिद्धयः। (योग. कैवल्यपाद, सूत्र.-1)

(आ) श्रीमद्भगवद्गीता-

(क) योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जय।
सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते। (2/48)

(ख) बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदुष्कृते।
तस्माद्योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम् ।। (2/50)

(ग) श्रुतिविप्रतिपन्ना ते यदा स्थास्यति निश्चला।
समाधावचला बुद्धिस्तदा योगमवाप्स्यसि।। (2/53)

(घ) तानि सर्वाणि संयम्य युक्त आसीत् मत्परः।
वशे हि यस्येन्द्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता।। (2/61)





चतुर्दशः पाठः

कथं शब्दानुशासनं कर्तव्यम्

यह पाठ महर्षि पतञ्जलि विरचित महाभाष्य से उद्धृत है। इसमें शब्दों के अनुशासन का वर्णन किया गया है। इस पाठ में वर्णन किया गया है कि हमें कैसे शब्दों का उपदेश करना चाहिये। अर्थात् केवल शब्दों का उपदेश करना चाहिये, अथवा अपशब्दों का अथवा दोनों का। इसी का समाधान प्रस्तुत पाठ में पौराणिक आख्यानक के माध्यम से किया गया है।

शब्दानुशासनमिदानीं कर्तव्यम्। किं शब्दोपदेशः कर्तव्यः, आहोस्विदपशब्दोपदेशः, आहोस्विदुभयोपदेश इति?

अन्यतरोपदेशेन कृतं स्यात्। तद्यथा–भक्ष्यनियमेनाभक्ष्यप्रतिषेधो गम्यते। 'पञ्च पञ्चनखा भक्ष्याः' इत्युक्ते गम्यत एतत्- अतोऽन्येऽभक्ष्या इति॥

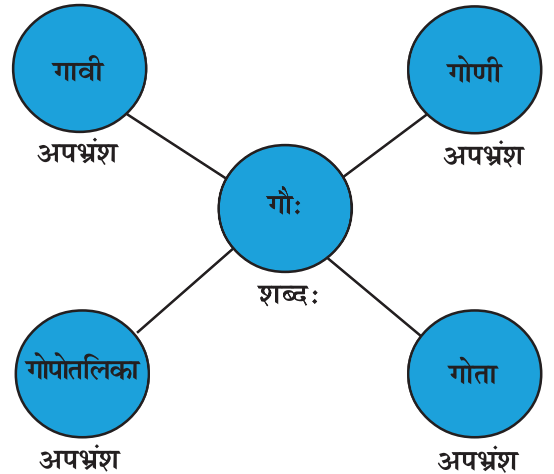
अभक्ष्यप्रतिषेधेन च भक्ष्यनियमः। तद्यथा– 'अभक्ष्यो ग्राम्यकुक्कुटः अभक्ष्यो ग्राम्यसूकरः' इत्युक्ते गम्यत एतत्–आरण्यो भक्ष्य इति॥

एवमिहापि।

यदि तावच्छब्दोपदेशः क्रियते, गौरित्येतस्मिन्नुपदिष्टे गम्यत एतत् गाव्यादयोऽपशब्दा इति।

अथाप्यपशब्दोपदेशः क्रियेत, गाव्यादिषूपदिष्टेषु गम्यत एतत्–गौरित्येष शब्द इति॥

किं पुनरत्र ज्यायः?



लघुत्वाच्छबदोपदेशः। लघीयाञ्छब्दोपदेशः। गरीयानपशब्दोपदेशः। एकैकस्य शब्दस्य बहवोऽपभ्रंशाः। तद्यथा–गौरित्यस्य शब्दस्य गावी गोणी गोता गोपोतलिका–इत्येवमादयोऽपभ्रंशाः।

इष्टान्वाख्यानं खल्वपि भवति।।

अथैतस्मिन्शब्दोपदेशे सति किं शब्दानां प्रतिपत्तौ प्रतिपदपाठः कर्तव्यः- गौरश्वः पुरुषो हस्ती शकुनिर्मृगो ब्राह्मण इत्येवमादयः शब्दाः पठितव्या?

नेत्याह। अनभ्युपाय एष शब्दानां प्रतिपत्तौ प्रतिपदपाठः।। एवं हि श्रूयते-''बृहस्पतिरिन्द्राय दिव्यं वर्षसहस्रं प्रतिपदोक्तानां शब्दानां शब्दपारायणं प्रोवाच नान्तं जगाम''।। बृहस्पतिश्च प्रवक्ता, इन्द्रश्चाध्येता, दिव्यं वर्षसहस्रमध्ययनकालः, न चान्तं जगाम।

किं पुनरद्यत्वे? यः सर्वथा चिरं जीवति वर्षशतं जीवति।

चतुर्भिश्च प्रकारैर्विद्योपयुक्ता भवति-आगमकालेन, स्वाध्यायकालेन, प्रवचनकालेन, व्यवहारकालेनेति। तत्र चास्यागमकालेनैवायुः पर्युपयुक्तं स्यात्। तस्मादनभ्युपायः शब्दानां प्रतिपत्तौ प्रतिपदपाठः।।

कथं तर्हीमे शब्दाः प्रतिपत्तव्याः?

किञ्चित्सामान्यविशेषवल्लक्षणं प्रवर्त्यम्। येनाल्पेन यत्नेन महतो महतः शब्दौघान् प्रतिपद्येरन्।।

किं पुनस्तत्?

उत्सर्गापवादौ। कश्चिदुत्सर्गः कर्तव्यः, कश्चिदपवादः।।

कथञ्जातीयकः पुनरुत्सर्गः कर्तव्यः कथञ्जातीयकोऽपवादः?

सामान्येनोत्सर्गः कर्तव्यः। तद्यथा-''कर्मण्यण्''।

तस्य विशेषेणापवादः। तद्यथा-''आतोऽनुपसर्गे कः''

शब्दार्थाः

इदानीम्	–	अधुना, अब।
कर्त्तव्यम्	–	कुर्यात्, करना चाहिए।
शब्दोपदेशः	–	शब्दकथनम्, शब्द कथन।
अपशब्द	–	अपकथनम्, अपशब्द कथन।
अन्यतरः	–	एकतरः, एक
भक्ष्यम्	–	खादनीयम्, खाने योग्य।
उक्ते	–	कथिते, कहने पर।
आरण्यः	–	वन्यः, वन के।

ज्यायः	–	श्रेष्ठः, श्रेष्ठ।
आख्यानम्	–	कथनम्, कथन।
पठितव्याः	–	पठेयुः, पढ़ने चाहिए।
प्रतिपत्तौ	–	ज्ञाने, जानने पर।
अध्येता	–	श्रोता, सुनने वाला।
उपयुक्ता	–	उपयोगिनी, उपयोगी।
कृत्स्नम्	–	सम्पूर्णम्, सारी।
प्रतिपत्तव्याः	–	ज्ञातव्याः, जानने चाहिए।
औघान्	–	समूहान्, समूह को।
प्रतिपद्येरन्	–	जानीयुः, जाना चाहिए।

टिप्पणी:– कर्मण्यण् (पाणिनि सूत्र– 3–2–1)। उदाहरण– कुम्भकारः, कुम्भं करोति इति, कुम्भं $\sqrt{\text{कृ}}$ अण्

आतोऽनुपसर्गे कः (पाणिनि सूत्र– 3–2–2)। उदाहरण– जलदः जलं ददाति इति, जलं $\sqrt{\text{दा}}$ क

उपपद तत्पुरुष समास में धातु से सामान्यतया 'अण्' प्रतयय होता है, किन्तु यदि धातु आकारान्त एवं उपसर्ग रहित है तो उससे 'क' प्रतयय हो जाता है। इस प्रकार पहला सूत्र उत्सर्ग एवं दूसरा अपवाद हैं।

अभ्यास

1. **संस्कृतभाषायाम् उत्तरत ।**
   (क) मनुष्यस्य आयुः कति वर्षाणि मन्यते?
   (ख) कस्य नियमेन अभक्ष्यप्रतिषेधो गम्यते?
   (ग) गाम्यकुक्कुटः भक्ष्यः अभक्ष्यः वा?
   (घ) कः ज्यायः अस्ति?
   (ङ) कः गरीयान् अस्ति?

2. **रेखाङ्कितपदानि आधृत्य प्रश्ननिर्माणं कुरुत ।**
   (क) एकैकस्य शब्दस्य बहवः <u>अपभ्रंशाः</u> सन्ति।
   (ख) <u>शब्दानां</u> प्रतिपत्तौ प्रतिपदपाठः कर्तव्यः।
   (ग) <u>बृहस्पतिः</u> इन्द्राय प्रतिपदशब्दान् उक्तवान्।

(घ) चतुर्भिश्च प्रकारैर्विद्योपयुक्ता भवति।

(ङ) सामान्येन उत्सर्गः कर्तव्यः।

3 विपरीतार्थैः सह मेलनं कुरुत ।

(क) भक्ष्यम् - तदानीम्

(ख) लघीयान् - अनिष्टान्

(ग) एकः - अभक्ष्यम्

(घ) इष्टान् - गरीयान्

(ङ) इदानीम् - बहवः

4. अधोलिखितवाक्यानि पठित्वा शुद्धं वा अशुद्धं समक्षं लिखत ।

(क) अन्यतरोपदेशेन कृतं स्यात्।

(ख) इष्टान्वाख्यानं खल्वपि भवति।

(ग) यः सर्वथा चिरं जीवति वर्षशतं न जीवति।

(घ) चतुर्भिश्च प्रकारैर्विद्योपयुक्ता न भवति।

(ङ) आगमकालेनैवायुः कृत्स्नं पर्युपयुक्तं स्यात्।

5. शब्दानाम् अर्थं लिखित्वा वाक्येषु प्रयोगं कुरुत ।

(क) शब्दानुशासनम् - ....

(ख) भक्ष्यम् - ....

(ग) इदानीम् - ....

(घ) चिरम् - ....

(ङ) प्रवक्ता - ....

(च) कृत्स्नम् - ....

6. रिक्तस्थानानि पूरयत ।

प्रतिपदपाठः कर्तव्यः, शब्दोपदेशाः, अपभ्रंशाः, अपशब्दोपदेशाः, अभक्ष्यप्रतिषेधः, शब्दानुशासनम्

(क) इदानीं..............................कर्त्तव्यम्।

(ख) भक्ष्यनियमेन..............................गम्यते।

(ग) गरीयान्..............................।

(घ) एकैकशब्दस्य बहवः..............................भवन्ति।

(ङ) लघुत्वात्..............................।

(च) शब्दोपदेशे सति शब्दानां प्रतिपत्तौ..............................।

7. उदाहरणानुसारं लिखत ।

यथा कर्त्तव्यः कृ+तव्यत्

(क) भक्ष्यः – ....

(ख) उक्तः – ....

(ग) कृतम् – ....

(घ) उपयुक्ता – ....

(ङ) उपदिष्टः – ....

8. सन्धिविच्छेदं कुरुत ।

(क) शब्दोपदेशः – ....+................................

(ख) अन्येऽभक्ष्याः – ....+................................

(ग) गाव्यादिषूपदिष्टेषु – ....+................................

(घ) गौरिति – ....+................................

(ङ) लघुत्वाच्छब्दोपदेशः – ....+................................

(च) इष्टान्वाख्यानम् – ....+................................

(छ) पुनरत्र – ....+................................

(ज) अथैतस्मिन् – ....+................................

(झ) इत्येवम् – ....+................................

(ञ) प्रतिपदोक्तानाम् – ....+................................

योग्यताविस्तारः

अथ शब्दानुशासनम् व्याकरणमहाभाष्य का प्रथम सूत्र है। शब्दानुशासन अष्टाध्यायी की संज्ञा है और इसी को भाष्यकार पतञ्जलि ने 'शब्दानुशासनं नाम शास्त्रम्' से स्पष्ट की है। इसमें सर्वलोकप्रसिद्ध साधु शब्दों का अनुशासन है।

लौकिकव्यवहार में पद नियत नहीं होते परन्तु वेदवाक्यों में नियत होते हैं, वह बदले नहीं जा सकते। अतः लौकिक शब्दों को एक-एक करके स्वतन्त्र रूप में पढ़ दिया है, पर वैदिक शब्दों को मन्त्रस्थ-क्रम-विशिष्ट ही पढ़ा जाता है।

पाणिनीय व्याकरण को 'त्रिमुनि व्याकरण' नाम से भी जाना जाता है। पाणिनि व्याकरण की परम्परा में पाणिनि, कात्यायन व पतञ्जलि के क्रमशः अष्टाध्यायी, वार्तिक एवं महाभाष्य प्रमुख एवं प्रामाणिक ग्रन्थ हैं। महर्षि पतञ्जलि का समय ई.पू. प्रथम माना जाता है।

शाश्वती

द्वितीयो भागः

द्वादशवर्गाय संस्कृतस्य पाठ्यपुस्तकम्

(ऐच्छिकपाठ्यक्रमः)





राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

ISBN 81-7450-638-1

प्रथम संस्करण
दिसंबर 2006 पौष 1928

पुनर्मुद्रण
अक्तूबर 2007 आश्विन 1929
जनवरी 2008 पौष 1929
जनवरी 2009 पौष 1930
जनवरी 2010 माघ 1931
अप्रैल 2019 चैत्र 1941

PD 5T RSP

₹ **85.00**

एन.सी.ई.आर.टी. वाटरमार्क 70 जी.एस.एम. पेपर पर मुद्रित।

प्रकाशन विभाग में सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग, नयी दिल्ली 110016 द्वारा प्रकाशित तथा शगुन ऑफ़सेट प्रा. लि., बी-3, सेक्टर-65, नोएडा-201301 (उ.प्र.) द्वारा मुद्रित।

एन. सी. ई. आर. टी. के प्रकाशन प्रभाग के कार्यालय

एन.सी.ई.आर.टी. कैंपस
श्री अरविंद मार्ग
नयी दिल्ली 110 016 फ़ोन : 011-26562708

108, 100 फीट रोड
हेली एक्सटेंशन, होस्डेकेरे
बनाशंकरी III इस्टेज
बैंगलूर 560 085 फ़ोन : 080-26725740

नवजीवन ट्रस्ट भवन
डाकघर नवजीवन
अहमदाबाद 380 014 फ़ोन : 079-27541446

सी.डब्ल्यू.सी. कैंपस
निकट: धनकल बस स्टॉप पनिहटी
कोलकाता 700 114 फ़ोन : 033-25530454

सी.डब्ल्यू.सी. कॉम्प्लैक्स
मालीगांव
गुवाहाटी 781021 फ़ोन : 0361-2674869

प्रकाशन सहयोग

अध्यक्ष, प्रकाशन विभाग : एम. सिराज अनवर
मुख्य संपादक : *श्वेता उप्पल*
मुख्य उत्पादन अधिकारी : *शिव कुमार*
मुख्य व्यापार प्रबंधक : *अबिनाश कुल्लू*
सहायक संपादक : *एम. लाल*
उत्पादन सहायक : *सुनील कुमार*

आवरण एवं चित्रांकन
अरूप गुप्ता



पुरोवाक्

2005 ईस्वीयायां राष्ट्रिय-पाठ्यचर्या-रूपरेखायाम् अनुशंसितं यत् छात्राणां विद्यालयजीवनं विद्यालयेतरजीवनेन सह योजनीयम्। सिद्धान्तोऽयं पुस्तकीय-ज्ञानस्य तस्याः परम्परायाः पृथक् वर्तते, यस्याः प्रभावात् अस्माकं शिक्षाव्यवस्था इदानीं यावत् विद्यालयस्य परिवारस्य समुदायस्य च मध्ये अन्तरालं पोषयति। राष्ट्रियपाठ्यचर्यावलम्बितानि पाठ्यक्रम-पाठ्यपुस्तकानि अस्य मूलभावस्य व्यवहारदिशि प्रयत्न एव। प्रयासेऽस्मिन् विषयाणां मध्ये स्थितायाः भित्तेः निवारणं ज्ञानार्थं रटनप्रवृत्तेश्च शिथिलीकरणमपि सम्मिलितं वर्तते। आशास्महे यत् प्रयासोऽयं 1986 ईस्वीयायां राष्ट्रिय-शिक्षा-नीतौ अनुशंसितायाः बालकेन्द्रित-शिक्षाव्यवस्थायाः विकासाय भविष्यति।

प्रयत्नस्यास्य साफल्यं विद्यालयानां प्राचार्याणाम् अध्यापकानाञ्च तेषु प्रयासेषु निर्भरं यत्र ते सर्वानपि छात्रान् स्वानुभूत्या ज्ञानमर्जयितुं, कल्पनाशीलक्रियाः विदधातुं, प्रश्नान् प्रष्टुं च प्रोत्साहयन्ति। अस्माभिः अवश्यमेव स्वीकरणीयं यत् स्थानं, समयः, स्वातन्त्र्यं च यदि दीयेत, तर्हि शिशवः वयस्कैः प्रदत्तेन ज्ञानेन संयुज्य नूतनं ज्ञानं सृजन्ति। परीक्षायाः आधारः निर्धारित-पाठ्यपुस्तकमेव इति विश्वासः ज्ञानार्जनस्य विविधसाधनानां स्रोतसां च अनादरस्य कारणेषु मुख्यतमम्। शिशुषु सर्जनशक्तेः कार्यारम्भप्रवृत्तेश्च आधानं तदैव सम्भवेत् यदा वयं तान् शिशून् शिक्षणप्रक्रियायाः प्रतिभागित्वेन स्वीकुर्याम, न तु निर्धारितज्ञानस्य ग्राहकत्वेन एव।

इमानि उद्देश्यानि विद्यालयस्य दैनिककार्यक्रमे कार्यपद्धतौ च परिवर्तनमपेक्षन्ते। यथा दैनिक-समय-सारण्यां परिवर्तनशीलत्वम् अपेक्षितं तथैव वार्षिककार्यक्रमाणां निर्वहणे तत्परता आवश्यकी येन शिक्षणार्थं नियतेषु कालेषु वस्तुतः शिक्षणं भवेत्। शिक्षणस्य मूल्याङ्कनस्य च विधयः ज्ञापयिष्यन्ति यत् पाठ्यपुस्तकमिदं छात्राणां विद्यालयीय-जीवने आनन्दानुभूत्यर्थं कियत् प्रभावि वर्तते, न तु नीरसतायाः साधनम्। पाठ्यचर्याभारस्य निदानाय पाठ्यक्रमनिर्मातृभिः बालमनोविज्ञानदृष्ट्या अध्यापनाय उपलब्ध कालदृष्ट्या च विभिन्नेषु स्तरेषु विषयज्ञानस्य पुनर्निर्धारणेन प्रयत्नो विहितः। पुस्तकमिदं छात्राणां कृते चिन्तनस्य, विस्मयस्य, लघुसमूहेषु वार्तायाः, कार्यानुभवादि- गतिविधीनां च कृते प्राचुर्येण अवसरं ददाति। पाठ्यपुस्तकस्यास्य विकासाय विशिष्टयोगदानाय राष्ट्रियशैक्षिकानुसन्धानप्रशिक्षणपरिषद्

भाषापरामर्शदातृसमितेः अध्यक्षाणां प्रो. नामवरसिंहमहोदयानां, संस्कृतपाठ्यपुस्तकानां मुख्यपरामर्शकानां प्रो. राधावल्लभत्रिपाठिमहाभागानां, पाठ्यपुस्तकनिर्माणसमितेः सदस्यानाञ्च कृते हार्दिकीं कृतज्ञतां ज्ञापयति। पुस्तकस्यास्य विकासे नैके विशेषज्ञाः अनुभविनः शिक्षकाश्च योगदानं कृतवन्तः, तेषां संस्थाप्रमुखान् संस्थाश्च प्रति धन्यवादो व्याह्रियते।

पाठ्यपुस्तकविकासक्रमे उन्नतस्तराय निरन्तरं प्रयत्नशीला परिषदियं पुस्तकमिदं छात्राणां कृते उपयुक्ततरं कर्तुं विशेषज्ञैः अनुभविभिः अध्यापकैश्च प्रेषितानां सत्परामर्शानां सदैव स्वागतं विधास्यति।

नव देहली
नवम्बर 2006

निदेशकः
राष्ट्रियशैक्षिकानुसंधानप्रशिक्षणपरिषद्

पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति

अध्यक्ष, भाषा सलाहकार समिति

नामवर सिंह, *पूर्व अध्यक्ष,* भारतीय भाषा केन्द्र, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नयी दिल्ली

मुख्य परामर्शक

राधावल्लभ त्रिपाठी, *पूर्व अध्यक्ष,* संस्कृत विभाग, हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर

मुख्य समन्वयक

रामजन्म शर्मा, *पूर्व प्रोफ़ेसर* एवं *अध्यक्ष,* भाषा शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली

समन्वयक

कमलाकान्त मिश्र, *पूर्व प्रोफ़ेसर* संस्कृत, भाषा शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली

सदस्य

अनिता शर्मा, *प्रवक्ता,* संस्कृत, विवेकानन्द स्कूल, डी–ब्लॉक आनन्द विहार, दिल्ली

केदारनारायण जोशी, *अध्यक्ष,* संस्कृत अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन, म.प्र.

गुलाब सिंह, *प्रवक्ता,* संस्कृत, श.ब.कु.वि. राजकीय सर्वोदय विद्यालय, सिविल लाइन्स, दिल्ली–54

दीप्ति त्रिपाठी, *अध्यक्ष,* संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली–110007

बाबूलाल शर्मा, *अध्यक्ष,* संस्कृत विभाग, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर, राजस्थान

यतीन्द्र कुमार शर्मा, *प्रवक्ता,* संस्कृत, श.अ.बि. राजकीय सर्वोदय विद्यालय न. 1, लूडलो कैसल, दिल्ली–54

विरूपाक्ष वि. जड्डीपाल, *रीडर,* राष्ट्रिय संस्कृत विद्यापीठ, तिरुपति, आ.प्र.–517507

शान्ति आर्या, *प्रवक्ता,* एस.सी.ई.आर.टी., गुरूग्राम, हरियाणा

सुरेश चन्द्र शर्मा, *प्राचार्य,* राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक बाल विद्यालय, नं.–1, शक्ति नगर, दिल्ली–7

विभागीय सदस्य

कृष्णचन्द्र त्रिपाठी, *प्रोफ़ेसर संस्कृत,* भाषा शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली

रणजित बेहेरा, *असिस्टेंट प्रोफ़ेसर संस्कृत,* भाषा शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली



आभार

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद् उन सभी विषय-विशेषज्ञों एवं शिक्षकों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करती है, जिन्होंने इस पुस्तक के निर्माण में अपना सक्रिय योगदान दिया है।

परिषद् सुरेन्द्र झा, प्राचार्य, राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, लखनऊ कैम्पस की आभारी है, जिन्होंने इस पुस्तक के निर्माण में अपना यथासंभव योगदान दिया है। चन्द्रशेखर दास वर्मा की कृति 'पाषाणीकन्या' के अनुवादक नारायण दाश, हृषीकेश भट्टाचार्य, देवर्षि कलानाथ शास्त्री एवं भट्ट मथुरानाथ शास्त्री प्रभृति आधुनिक साहित्यकारों की भी आभारी है, जिनकी कृतियों से प्रस्तुत पुस्तक में पाठ्यसामग्री सङ्कलित की गई है।

सत्र 2017–18 में पुस्तक के पुनरीक्षण कार्य के समन्वयन के लिए भाषा शिक्षा विभाग के के.सी. त्रिपाठी, *प्रोफ़ेसर*, जतीन्द्र मोहन मिश्र, *प्रोफ़ेसर*, संगीता शर्मा, *असिस्टेंट प्रोफ़ेसर*, को परिषद् साधुवाद करती है। पुनरीक्षण में अनेकविध सहयोग एवं मार्गदर्शन के लिए परिषद् पी.एन. शास्त्री, *प्रोफ़ेसर*, कुलपति, राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, रमेश कुमार पांडेय, *प्रोफ़ेसर*, कुलपति, श्रीलालबहादुर शास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विद्यापीठ, रमेश भारद्वाज, *प्रोफ़ेसर*, संस्कृत विभाग-दिल्ली विश्वविद्यालय, रंजना अरोड़ा, *प्रोफ़ेसर* एवं विभागाध्यक्ष, डी.सी.एस, एन.सी.ई.आर.टी., आभा झा, *पी.जी.टी.*, संस्कृत, गार्गी सर्वोदय कन्या विद्यालय, ग्रीनपार्क, नयी दिल्ली के प्रति हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करती है। पुस्तक पुनरीक्षण में अनेकविध सहयोग हेतु जगदीश चन्द्र काला, *जे.पी.एफ़.*, यासमीन अशरफ, *जे.पी.एफ़.* एवं रेखा शर्मा, *डी.टी.पी. ऑपरेटर* धन्यवाद के पात्र हैं।

प्रकाशन कार्य में सक्रिय सहयोग के लिए भाषा शिक्षा विभाग कंप्यूटर स्टेशन के *इन्चार्ज* परशराम कौशिक, *कॉपी एडीटर* विभूति नाथ झा, सर्वेन्द्र कुमार एवं सतीश झा; *प्रूफ रीडर* राजमङ्गल यादव एवं *डी.टी.पी. ऑपरेटर* कमलेश आर्या, हरिदर्शन लोधी *डी.टी.पी. ऑपरेटर*, ममता गौड़ *संपादक* संविदा, प्रकाशन प्रभाग धन्यवाद के पात्र हैं।



भूमिका

संस्कृत भारत की आत्मा और भारतीय संस्कृति का स्रोत है। वैदिक काल से आज तक सतत् प्रवहमान संस्कृत साहित्य की अजस्र स्रोतस्विनी में हमारे ऐहिक तथा पारलौकिक चिन्तन, देशभक्ति और विश्वबन्धुत्व की भावना का प्रसार, आचार एवं विचार का मञ्जुल मणिकाञ्चन समवाय, ज्ञान और विज्ञान के क्षेत्र में गम्भीर चिन्तन, आत्मा और परमात्मा में ऐक्य के माध्यम से प्राणिमात्र में समता के भाव की स्थापना और उदात्त संस्कारों के द्वारा श्रेष्ठ नागरिकों के निर्माण की क्षमता विद्यमान है।

संस्कृत भाषा और उसका समृद्ध वाङ्मय राष्ट्र की एक ऐसी निधि है, जो सनातन मूल्यों और अभिनव प्रवृत्तियों में समन्वय स्थापित करने की अद्भुत क्षमता से सम्पन्न है। देश की इस सर्वाधिक प्राचीन भाषा ने भारत की मध्यकालीन और आधुनिक भाषाओं के विकास में अपना महनीय योगदान किया है। आधुनिक भारत की प्रायः सभी भाषाओं ने संस्कृत से शब्दसम्पदा ग्रहण कर अपने शब्दकोश में अभिवृद्धि की है। आज समूचा विश्व संस्कृत भाषा और उसके साहित्य के महत्त्व को स्वीकार कर इसके प्रसार की दिशा में अग्रसर है। आज विश्व के अनेक विश्वविद्यालयों में संस्कृत के अध्ययन, अध्यापन और अनुशीलन की प्रवृत्ति उत्तरोत्तर विकसित हो रही है। इससे संस्कृत की सार्वभौम महत्ता स्वतः सिद्ध हो रही है।

प्रस्तुत संकलन की पृष्ठभूमि

संस्कृत के अखिल भारतीय महत्त्व को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद् के तत्त्वावधान में वरिष्ठ माध्यमिक स्तर पर वैकल्पिक विषय के रूप में संस्कृत पढ़ने वाले छात्रों के लिए प्रस्तुत संकलन का सम्पादन किया गया है। विगत वर्षों में परिषद् द्वारा प्रकाशित विद्यालयीय शिक्षा के लिए *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा* तथा पाठ्यपुस्तकों की एक बार पुनः आमूल-चूल समीक्षा की गयी तथा *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2005* के मानक लक्ष्यों का निर्धारण किया गया। इन लक्ष्यों में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है-*भारमुक्त शिक्षा।* विद्वानों का अनुभव है कि पाठ्यग्रन्थों के दुरूह भार से बोझिल छात्र, एक बिन्दु पर पहुँचकर पाठ्यक्रम को 'भार' मानने एवं अनुभव करने लगता है। पाठ्यक्रमों की विविधता, बहुलता तथा मात्राधिक्य – तीनों मिलकर छात्र की अध्ययन-अभिरुचि को प्रायः समाप्त ही कर देते हैं। अतः आवश्यक है कि छात्रों की अध्ययन-अभिरुचि को नित्य नवीन बनाने के लिए शिक्षा (के पाठ्यक्रम) को भारमुक्त किया जाये।

जब शिक्षा भारमुक्त होगी तो वह स्वयमेव एक 'आनन्दप्रद अनुभूति' सिद्ध होगी। यह पाठ्यचर्या–2005 का दूसरा लक्ष्य है। आनन्द तभी प्राप्त होता है जब किसी कार्य में उद्वेग न हो, अरुचि न हो, थकान न हो। शिक्षा के भारमुक्त होने पर ये गुण स्वतः उद्‌भूत होंगे और तब छात्र स्वयं अपने पाठ्यक्रम में आकृष्ट एवं अनुरक्त होगा। इस आनन्दवृद्धि के लिए पाठ्यक्रम में ऐसे ज्ञान–सन्दर्भों का समावेश किया जाना चाहिए जिनमें उदात्त जीवन मूल्य हों, जिनमें घटना–वैचित्र्य के साथ ही साथ आधुनिक जनजीवन का प्रतिबिम्ब भी हो।

वस्तुतः शिक्षा एवं पाठ्यक्रम का यह पक्ष अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। देववाणी संस्कृत का वाङ्मय वेदों से प्रारम्भ होकर आधुनिक युग तक व्याप्त है। यह वाङ्मय भारतवर्ष के पिछले पाँच हजार वर्षों का एक जीवन्त दस्तावेज है जिसमें राष्ट्र का इतिहास, भूगोल, दर्शन, संस्कृति, सामाजिक उथल–पुथल, नित्य परिवर्तनशील जनजीवन सब कुछ विद्यमान है।

ऐसी स्थिति में आवश्यक है कि प्राचीन ग्रन्थों से हम ऐसे ही अंश पाठ्यक्रम में समाविष्ट करें जिनमें आज का भी राष्ट्रीय एवं सामाजिक परिवेश समरस हो। श्रवण कुमार की मातृपितृभक्ति, हरिश्चन्द्र की सत्यनिष्ठा, वाल्मीकि–वर्णित ऋतुओं का शाश्वत सौन्दर्य तथा कथासरित्सागर, पञ्चतन्त्र, हितोपदेश एवं पुरुषपरीक्षा आदि प्राचीन ग्रन्थों की शिक्षाप्रद कहानियाँ इसी प्रकार की हैं। इनका सन्दर्भ सार्वकालिक है अतः इनकी सम्प्रेषणीयता भी जैसी की तैसी है।

पाठ्यचर्या का तीसरा लक्ष्य भी यही निश्चित किया गया – *जीवन के परिवेश से शिक्षा का घनिष्ठ सम्बन्ध।* इस लक्ष्य की पूर्ति तभी हो सकेगी जब संकलित पाठांशों एवं आधुनिक जीवन–परिवेश के बीच सेतु हो, अन्तःसम्बन्ध हो।

पाठ्यचर्या का चौथा लक्ष्य निश्चित किया गया – *शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार।* इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए हमें यह ध्यान रखना होगा कि हमारी पाठ्यपुस्तकें सर्वथा निरवद्य हों, विवादमुक्त हों। संकलित पाठ राष्ट्रीय आदर्शों तथा संवैधानिक मान्यताओं के सर्वथा अनुकूल हों। पुरानी पाठ्यपुस्तकों में प्रायः 'मूलपाठ की रक्षा' के लोभवश उपर्युक्त तथ्यों की उपेक्षा की गयी। परन्तु आज का भारतीय समाज अत्यन्त संवेदनशील है। अतः यह ध्यान रखा ही जाना चाहिए कि किसी भी संकलित अंश से समाज के किसी भी वर्ग की भावना आहत न हो। पाठों से सर्वधर्म–समभाव, सर्वोदय तथा सामाजिक समानता आदि का समर्थन होना चाहिए। किसी भी वर्ग, जाति, समुदाय अथवा प्रवृत्ति की अवमानना नहीं होनी चाहिए और न ही किसी के प्रति प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रीति से कोई आक्षेप होना चाहिए।

पाठ्यचर्या का अन्तिम लक्ष्य अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है, विशेषकर संस्कृत पाठ्यक्रम के सन्दर्भ में। यह लक्ष्य है – *छात्रों को चिन्तन के लिए प्रेरित करना।* पाठ्यक्रम ऐसा बनाया जाना चाहिए जो छात्रों को स्वयं स्फूर्त बना सके। प्रायः शिक्षक छात्रों को 'निरुपाय' बनाता है यह कहकर कि 'कण्ठस्थ करने के अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं।'

शब्दरूप एवं धातुरूप कण्ठस्थ करते–करते अधिकांश छात्र निराश, कुण्ठित एवं हतप्रभ होकर संस्कृताध्ययन से विरत हो जाते हैं। छात्रों में एक भ्रम–सा व्याप्त हो जाता है कि संस्कृत में सब कुछ रटने से ही सिद्ध होगा। जबकि ऐसा बिलकुल नहीं है। कौन–सी ऐसी भाषा है जिसमें छात्र महत्त्वपूर्ण अंशों को कण्ठस्थ नहीं करता? विद्या का कण्ठस्थ होना तो प्रशंसनीय बात है, इसकी निन्दा कैसी?

परन्तु संस्कृत भाषा में प्रवीण होने के लिए सब कुछ रट डालने की कोई आवश्यकता नहीं। आवश्यकता है तो केवल इस बात की कि छात्र सर्वत्र 'अध्यापकाश्रित' ही न हो। वह स्वयं भी कुछ सोचना विचारना अथवा करना सीखे। किसी पाठ को पढ़कर वह इतना समर्थ हो जाय कि पाठाश्रित लघु प्रश्नों का उत्तर दे सके, किसी अंश का आशय बता सके, रिक्त स्थानों की पाठ्यांश के आधार पर पूर्ति कर सके, प्रकृति–प्रत्यय का समुचित मेलन कर सके तथा योग्यता–विस्तार के अन्यान्य मानकों को भी आत्मसात् कर सके।

निष्कर्ष यह है कि संस्कृताध्यायी छात्र का संस्कृत के साथ नीर–क्षीर सम्बन्ध होना चाहिए न कि तिल–तण्डुलवत् संसृष्टि। यदि छात्र 'संस्कृतमय' नहीं हुआ, उसकी संस्कृत समझने, लिखने, बोलने की क्षमता विकसित नहीं हो पायी तो फिर संस्कृत पढ़ने का लाभ क्या हुआ? यह सब सम्भव है पाठ्यचर्या के उपर्युक्त लक्ष्यों को अपनाने से।

उपर्युक्त लक्ष्यों को चरितार्थ एवं अनुप्रयुक्त करने की दृष्टि से ही 'नवीन पाठ्यक्रम' की संकल्पना की गयी तथा नये मानदण्डों के आधार पर छठी, नवीं, तथा ग्यारहवीं कक्षा के छात्रों के लिए नयी पाठ्यपुस्तकों का निर्माण किया गया है। इन पुस्तकों का प्रमुख वैशिष्ट्य है–

क – प्राचीन ग्रन्थांशों के साथ ही साथ आधुनिक संस्कृत रचनाओं का भी समावेश।

ख – अन्य भारतीय भाषाओं के साहित्य की विविध अनूदित (संस्कृत में) रचनाओं का भी पाठ्यक्रम में समावेश।

ग – पाठ्यचर्या के विविध लक्ष्यों की पूर्ति हेतु नये अभ्यास प्रश्नों, टिप्पणियों एवं योग्यता विस्तार–उपायों का समावेश।

घ – शिक्षण–संकेतों का निर्देश।

पाठ्यचर्या के लक्ष्यों को दृष्टि में रखकर सुधी प्राध्यापकों एवं विषय–विशेषज्ञों के समवेत प्रयास से निर्मित प्रस्तुत पाठ्यपुस्तक निश्चय ही संस्कृताध्ययन के क्षेत्र में एक शुभारम्भ है। यह पाठ्यक्रम संस्कृताधीती छात्रों में उन गुणों को विकसित करेगा जो पाठ्यचर्या के लक्ष्यरूप में विन्यस्त किये गये हैं।

पाठ्यपुस्तक–समिति के *मुख्य परामर्शक* के रूप में हमें मार्गदर्शन मिला है संस्कृत के प्रख्यात विद्वान् प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी, *अध्यक्ष,* संस्कृत विभाग, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.) का जो श्रेष्ठ कवि, समीक्षक, अनेक पाठ्यग्रन्थ–निर्माता एवं अनुभव के धनी कर्मठ विद्वान् हैं। *विशेषज्ञ विद्वान्* के रूप में हम लाभान्वित हुए हैं प्रो. केदारनारायण जोशी, *आचार्य* एवं *अध्यक्ष,*

संस्कृत अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन (म.प्र.) एवं प्रो. दीप्ति त्रिपाठी अध्यक्ष, संस्कृत विभाग दिल्ली विश्वविद्यालय से जो पूर्व में भी राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद् की संस्कृत सम्बन्धी अनेक परियोजनाओं, संगोष्ठियों एवं उपक्रमों में अपना सक्रिय योगदान देते रहे हैं। समिति के अन्यान्य समस्त सदस्य भी विषय एवं भाषा के मर्मज्ञ, यशस्वी प्राध्यापक हैं।

प्रस्तुत सङ्कलन में बारह पाठ हैं। **'विद्ययाऽमृतमश्नुते'** नामक प्रथम पाठ ईशावास्योपनिषद् से सङ्कलित किया गया है। इसमें ईश्वर की सर्व-व्यापकता, कर्म की महत्ता, आत्मा की विशेषता तथा विद्या और अविद्या दोनों की उपादेयता का निरूपण एवं विद्या से अमरत्व की प्राप्ति का प्रतिपादन किया गया है।

द्वितीय पाठ **'रघुकौत्ससंवादः'** महाकवि कालिदास प्रणीत रघुवंश महाकाव्य के पञ्चम सर्ग से संगृहीत है। इसमें राजा दिलीप के पुत्र रघु की दानवीरता का वर्णन है।

तृतीय पाठ **'बालकौतुकम्'** महाकवि भवभूति द्वारा विरचित उत्तररामचरितम् नामक नाटक के चतुर्थ अङ्क से सङ्कलित किया गया है। इसमें चन्द्रकेतु द्वारा रक्षित राजा राम के अश्वमेधीय अश्व को देखकर आश्रम के बालकों में उत्पन्न कौतूहल तथा लव द्वारा घोड़े को आश्रम में ले जाकर बाँधने की घटना का मार्मिक चित्रण किया गया है।

चतुर्थ पाठ **'कर्मगौरवम्'** श्रीमद्भगवद्गीता के द्वितीय एवं तृतीय अध्यायों से सङ्कलित है। इसमें कर्म की महत्ता तथा कर्मी की कुशलता का प्रतिपादन किया गया है।

पञ्चम पाठ **'शुकनासोपदेशः'** महाकवि बाणभट्ट के द्वारा विरचित कादम्बरी नामक गद्यकाव्य से सङ्कलित किया गया है। इसमें राजा तारापीड का नीतिनिपुण एवं अनुभवी मन्त्री शुकनास राजकुमार चन्द्रापीड को राज्याभिषेक के पूर्व वात्सल्य भाव से उपदेश देते हैं और रूप, यौवन, प्रभुता तथा ऐश्वर्य से उद्भूत दोषों से सावधान रहने की शिक्षा देते हैं। यह प्रत्येक युवक के लिए उपादेय उपदेश है।

षष्ठ पाठ **'सूक्तिसुधा'** में पण्डितराज जगन्नाथ, माघ, भवभूति, भारवि तथा भर्तृहरि नामक संस्कृत के कतिपय प्रतिनिधि महाकवियों की सूक्तियाँ सङ्कलित हैं।

सप्तम पाठ **'विक्रमस्यौदार्यम्'** सिंहासनद्वात्रिंशिका नामक कथासंग्रह से उद्धृत है। इसमें उज्जयिनी के न्यायप्रिय, पराक्रमी, विद्याप्रेमी एवं उदारमना सम्राट् विक्रमादित्य की दानवीरता तथा उदारता का वर्णन किया गया है।

अष्टम पाठ **'भूविभागाः'** मुगल सम्राट् शाहजहाँ के विद्वान् पुत्र दाराशिकोह द्वारा विरचित समुद्रसङ्गम नामक ग्रन्थ से संगृहीत है। इस पाठ में पृथ्वी के सात विभागों का रोचक वर्णन है। इसमें संस्कृत तथा फारसी भाषा के शब्दों का मञ्जुल मणिकाञ्चन समवाय परिलक्षित होता है।

नवम पाठ **'कार्यं वा साधयेयं देहं वा पातयेयम्'** संस्कृत के अर्वाचीन गद्यकार पण्डित अम्बिकादत्त व्यास द्वारा विरचित शिवराजविजय नामक गद्यकाव्य से संगृहीत है। इसमें छत्रपति शिवाजी के गुप्तचर की दृढ़ प्रतिज्ञा का वर्णन है।

दशम पाठ **'दीनबन्धुः श्रीनायारः'** उड़िया लेखक श्रीचन्द्रशेखरदास वर्मा के कथासंग्रह 'पाषाणीकन्या' के संस्कृत अनुवाद से संगृहीत है। इसके अनुवादक डा. नारायण दाश हैं। यह एक ऐसे अनाथ बालक की कथा है जो परिश्रम से जीवन में सफलता प्राप्त करता है और फिर प्रतिमाह अपनी आय का आधा से अधिक भाग अनाथालय के विकास के लिए दान करता है।

एकादश पाठ **'उद्भिज्जपरिषद्'** पण्डित हृषीकेश भट्टाचार्य द्वारा विरचित प्रबन्धमञ्जरी नामक निबन्ध की पुस्तक से सङ्कलित है। इसमें उद्भिज्ज परिषद् अर्थात् वृक्षों की सभा का वर्णन है। अश्वत्थ अर्थात् पीपल इस सभा के सभापति हैं। वे अपने भाषण में मानवों पर व्यंग्यपूर्ण प्रहार करते हैं।

द्वादश पाठ **'किन्तोः कुटिलता'** भट्ट मथुरानाथ शास्त्री के प्रबन्धपारिजात नामक निबन्धसंग्रह से सङ्कलित है। इसमें लेखक ने 'किन्तु' शब्द की कुटिलता का निरूपण करते हुए इस तथ्य का उद्घाटन किया है कि 'किन्तु' शब्द सम्बोधित व्यक्ति के लिए सुखदायक सिद्ध होता हो, ऐसे अवसर विरल ही होते हैं।

त्रयोदश पाठ **'योगस्य वैशिष्ट्यम्'** महर्षि पतञ्जलि विरचित 'योगसूत्रम्' पर आधारित संवादात्मक शैली में प्रस्तुत है। इसमें अष्टांग योग का वर्णन सरल भाषा में प्रस्तुत किया गया है।

अन्तिम पाठ चतुर्दश पाठ **'कथं शब्दानुशासनं कर्तव्यम्'** व्याकरण महाभाष्य के प्रथम आह्निक 'पस्पशा' से संगृहीत है जिसके रचयिता पाणिनि परम्परा के तृतीय मुनि पतञ्जलि हैं। साधु शब्द का ज्ञान करना आवश्यक होते हुए उसका उचित मार्ग क्या है, इस विषय पर चर्चा उदाहरणों एवं आख्यान सहित किया गया है।

शिक्षकों से निवेदन

शिक्षणकार्य में पाठ्यसामग्री के साथ शिक्षणविधि भी महत्त्वपूर्ण है। अतः अध्यापक-बन्धुओं से निवेदन है कि प्रस्तुत पाठ्यपुस्तक के पाठों का अध्यापन करते समय निम्नलिखित शिक्षणबिन्दुओं को ध्यान में रखें, ताकि शिक्षण रुचिकर एवं प्रभावोत्पादक हो सके।

1. उपनिषदों का मुख्य उद्देश्य वेद के गूढ अर्थ को उद्घाटित करना है। ईशावास्योपनिषत् से संकलित 'विद्ययाऽमृतमश्नुते' पाठ का शिक्षणकार्य करते समय पाठगत मन्त्रों का सस्वरवाचन भी आवश्यक है। वैदिक भाषा के जो शब्द लौकिक भाषा से पृथक् प्रतीत हों उनकी संरचना के विषय में छात्रों को अवगत कराएँ। मन्त्रों का अर्थ करते समय अभिधार्थ की अपेक्षा निर्वचन से अर्थविशेष को समझाएँ। लौकिक एवम् अध्यात्मविद्या एक दूसरे की

पूरक हैं तथा मानवजीवन के सर्वाङ्गीण विकास में समानरूप से उपयोगी हैं। इस तथ्य से छात्रों को विशेष रूप से अवगत कराएँ।

2. संस्कृत महाकाव्य परम्परा को बतलाते हुये महाकवि कालिदास के व्यक्तित्त्व एवं कर्तृत्त्व से छात्रों को अवगत कराएँ। 'रघुवंशमहाकाव्यम्' से संकलित प्रस्तुत पाठ 'रघुकौत्ससंवाद:' में प्रयुक्त छन्द और अलङ्कारों से छात्रों को परिचित कराएँ। श्लोकों का भाव समझाकर सस्वर पाठ भी कराएँ।
3. महाकवि भवभूति द्वारा विरचित 'उत्तररामचरितम्' नाटक से संकलित 'बालकौतुकम्' पाठ का कक्षा में छात्रों से अभिनय कराएँ।
4. श्रीमद्भगवद्गीता विश्वप्रसिद्ध ग्रन्थरत्न है। 'कर्मगौरवम्' पाठ के आधार पर करणीय कार्यों में सदा संलग्न रहने के लिए छात्रों को प्रेरित करें।
5. महाकवि बाणभट्ट संस्कृतसाहित्य के सर्वोत्कृष्ट गद्यकार हैं। उनके व्यक्तित्व और रचनाओं से छात्रों को परिचित कराएँ। 'कादम्बरी' से उद्धृत 'शुकनासोपदेश' पाठ के अनुसार युवावस्था में प्रवेश कर रहे छात्रों को अनुशासित करें। पाठगत समस्त पदों का विग्रह आदि समझाते हुए भाव स्पष्ट करें।
6. 'सूक्तिसुधा' के अन्तर्गत पण्डितराज जगन्नाथ, माघ, भवभूति, भारवि एवं भर्तृहरि की रचनाओं से सुभाषित संकलित किए गए हैं। सूक्तियाँ निश्चित रूप से छात्रों के लिए उपयोगी हैं। अत: सुभाषितों के महत्त्व को समझाएँ तथा छात्रों को तदनुसार प्रेरित करें।
7. 'विक्रमस्यौदार्यम्' पाठ के माध्यम से छात्रों को कथा–साहित्य से परिचित कराएँ। पाठ के माध्यम से मित्रता, उदारता एवं दानशीलता आदि गुणों के प्रति छात्रों में रुचि उत्पन्न करें। कथाशिक्षण की विधि का उपयोग करते हुए गद्य का आदर्शवाचन एवम् अनुवाचन का भी छात्रों को अभ्यास कराएँ।
8. 'समुद्रसङ्गम:' से संकलित 'भूविभागा:' पाठ का अध्यापन कार्य कराते समय छात्रों को दाराशिकोह के जीवन एवं दर्शन तथा रचनाओं से अवगत कराएँ। छात्रों को रचना की शैली, ऐतिहासिकता एवं गद्यात्मकता को विशेषरूप से समझाएँ।
9. संस्कृत के प्रमुख अर्वाचीन गद्यकार पं. अम्बिकादत्त व्यास के जीवन एवं कृतियों का छात्रों को परिचय दें। पाठ के अनुसार कर्तव्यनिष्ठा के प्रति छात्रों को प्रेरित करें।
10. अन्यान्य भाषाओं से अनूदित संस्कृतरचनाएँ आजकल प्रचुरमात्रा में उपलब्ध हैं। उडियाभाषा से अनूदित पाठ 'दीनबन्धु: श्रीनायार:' के माध्यम से कर्मदक्षता, दाक्षिण्य और सेवाभाव आदि गुणों को अपनाने के लिए छात्रों को प्रेरित करें। संस्कृत में पत्रलेखन का छात्रों को अभ्यास कराएँ। इस अवसर पर अध्यापक बन्धु उडिया के वर्तमान साहित्य एवं लेखकों का भी परिचय दें।

11. 'उद्भिज्जपरिषद्' पाठ में सभापति अश्वत्थ (पीपल) के भाषण के माध्यम से वृक्षों के प्रति मानवीय व्यवहार का वर्णन है। छात्रों को वृक्षों के महत्त्व को बताते हुए वृक्षारोपण के प्रति प्रेरित करें। पं. हृषीकेश भट्टाचार्य तथा बाणभट्ट की गद्यशैली की विशेषताएँ तुलनात्मकदृष्टि से छात्रों को समझाएँ। इसी के साथ ही पर्यावरण के भी प्रति छात्रों में चेतना उत्पन्न करें।
12. पं. श्री भट्ट मथुरानाथ शास्त्री के जीवन-परिचय व रचनाओं से छात्रों को अवगत कराएँ। 'किन्तोः कुटिलता' लेख के अनुभूत भाव छात्रों के समक्ष स्पष्ट करें।
13. योगदर्शन केवल ज्ञान का ही विषय नहीं, अपितु जीवन में प्रयोग करने का विषय है। यम एवं नियम के पालनपूर्वक आसन प्राणायाम आदि के अभ्यास से युवक-युवती असीम शारीरिक, मानसिक एवं नैतिक बल को प्राप्त करते हैं। शिक्षक छात्रों से इस बात पर चर्चा करें तथा व्यवहार में लाने के लिए प्रेरित करें!
14. इन्द्र-बृहस्पति आख्यानक के माध्यम से कैसे संस्कृत भाषा में असीमित शब्दराशि है जो कि विश्व की किसी अन्य भाषा में नहीं, तथापि उन शब्दों का ज्ञान-लाभ के लिए लघु मार्ग व्याकरण है, इस बात को शिक्षक छात्रों तक पहुँचा कर उन्हें व्याकरण अध्ययन के लिए प्रेरित करें।

भारत का संविधान

उद्देशिका

हम, भारत के लोग, भारत को एक [1][**संपूर्ण प्रभुत्व-संपन्न समाजवादी पंथनिरपेक्ष लोकतंत्रात्मक गणराज्य**] बनाने के लिए, तथा उसके समस्त नागरिकों को :

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक **न्याय,**

विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म

और उपासना की **स्वतंत्रता,**

प्रतिष्ठा और अवसर की **समता**

प्राप्त कराने के लिए,

तथा उन **सब में**

व्यक्ति की गरिमा और [2][**राष्ट्र की एकता**

और अखंडता] सुनिश्चित करने वाली **बंधुता**

बढ़ाने के लिए

दृढ़संकल्प होकर **अपनी इस संविधान सभा में** आज तारीख 26 नवंबर, 1949 ई. को **एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।**

---

1. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 की धारा 2 द्वारा (3.1.1977 से) ''प्रभुत्व-संपन्न लोकतंत्रात्मक गणराज्य'' के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 की धारा 2 द्वारा (3.1.1977 से) ''राष्ट्र की एकता'' के स्थान पर प्रतिस्थापित।

विषयानुक्रमणिका

मङ्गलम्

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवाः
भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवांसस्तनूभि-
र्व्यशेमहि देवहितं यदायुः ॥1॥

मधु वाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः।
माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः ॥2॥

मधु नक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिवं रजः।
मधु द्यौरस्तु नः पिता ॥3॥

मधुमान्नोवनस्पतिर्मधुमाँ अस्तु सूर्यः।
माध्वीर्गावो भवन्तुः नः ॥4॥

भावार्थः

हे देवगण! हम कानों से कल्याणकारी (वचन) सुनें, आँखों से कल्याणकारी (दृश्य) देखें। सभी स्थिर अङ्गों (स्वस्थ इन्द्रियों) से स्तुति करते हुए दिव्य आयु को प्राप्त करें ॥1॥

सुरभित वायु बहे। नदियाँ मधुर जल से युक्त हों। ओषधियाँ हमारे लिए मधुमय हों ॥2॥

रात्रियाँ मधुमय हों। प्रातः काल मधुर (सुप्रभात) हो। पृथिवी की धूल भी मधुमय अर्थात् मधुर अन्नप्रदायिनी हो। द्युलोक (नक्षत्रलोक) प्रकाशमय हो। परमेश्वर हमारे लिए कल्याणकारी हों ॥3॥

वनस्पतियाँ हमारे लिए मधुर होवें, सूर्य मधुर (अन्नादि देने वाले) होवें। गायें हमें मधुर (दूध देने वाली) हों ॥4॥